किशोर पराग का पहला अंक .

स्वतंत्रता-दिवस विशेषांक

अगस्त १९७१

पराग

भारतीय किशोरों का प्रिय मासिक

आभार : डा. देश दीपक

kissekahani.com

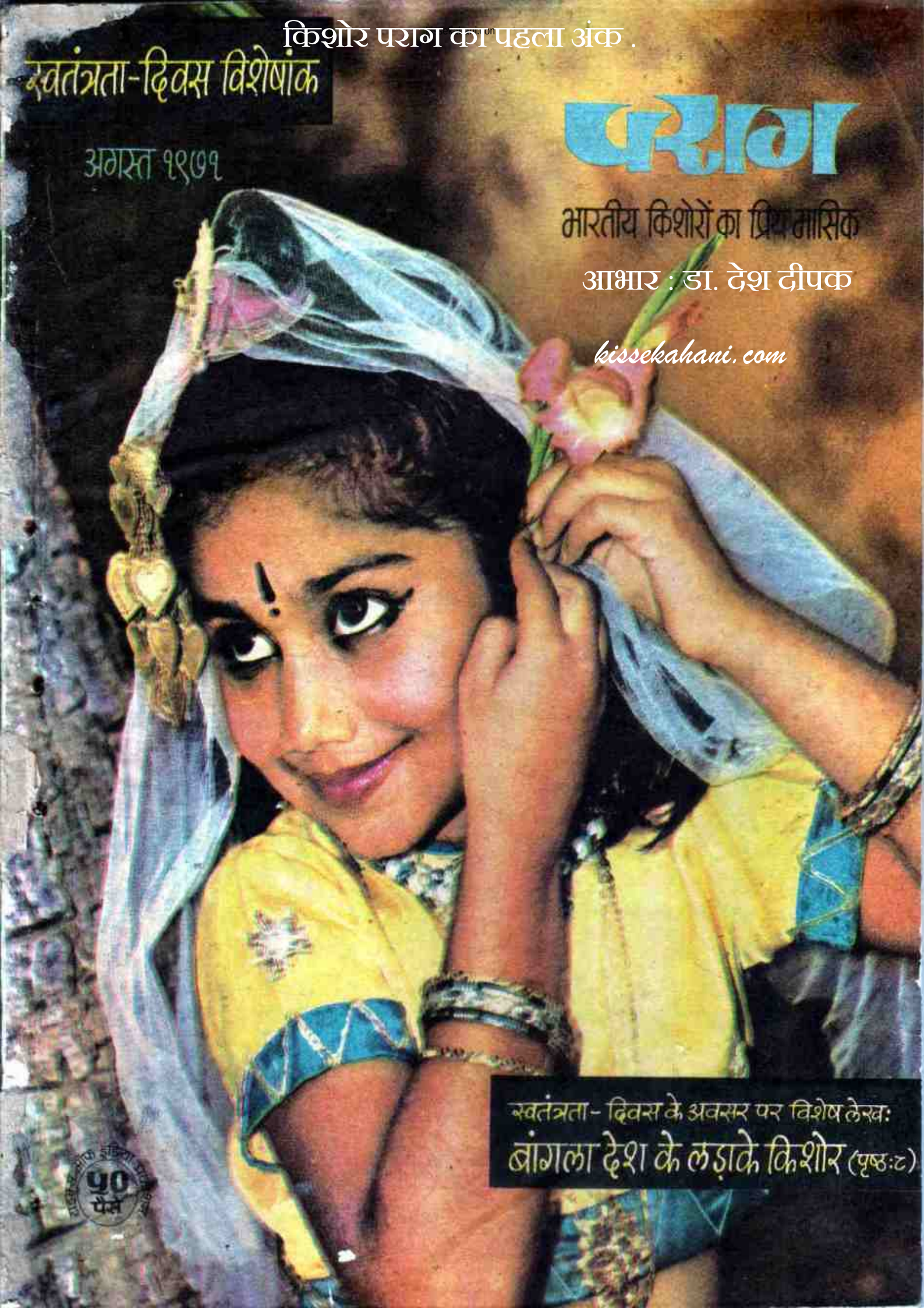

स्वतंत्रता-दिवस के अवसर पर विशेष लेख:

बांगला देश के लड़ाके किशोर (पृष्ठ:८)

५० पैसे

ताज़गी के पास आइये
अपनी प्यास बुझाइये

गोल्ड स्पॉट की अनोखी ताजगी और लाजवाब स्वाद का मजा लीजिये। इसमें आपको ताजे फलों जैसा स्वाद मिलेगा। इसकी ताजगी के क्या कहने! ऐसी ताजगी तो आपको प्रकृति की गोद में झूलने वाले झरनों में ही मिल सकेगी। इसका रसास्वादन कर आप मस्ती में झूम उठेंगे।

जी भर के जियो... गोल्ड स्पॉट पियो!

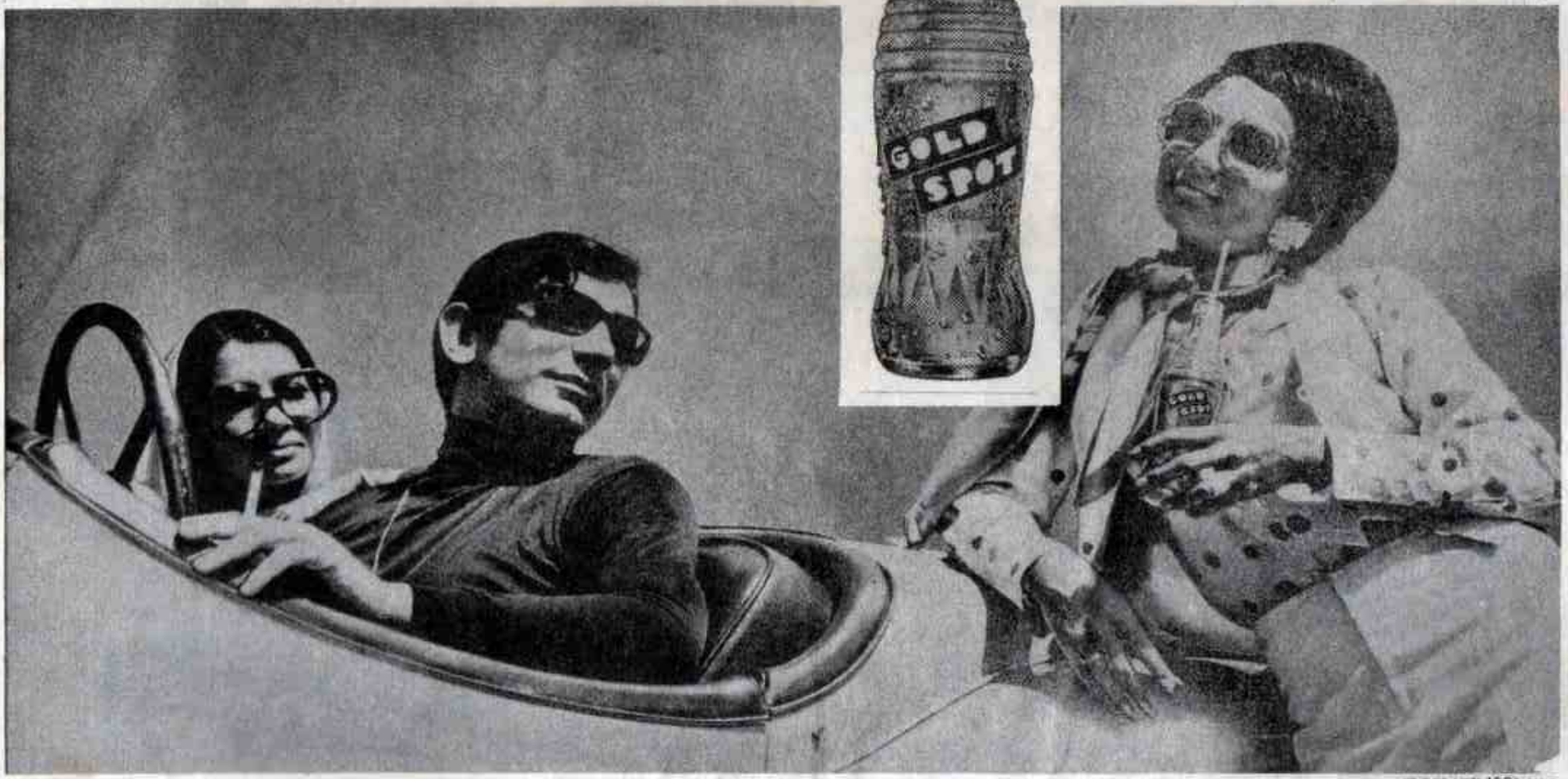

mcm/pb/39t hin

kissekahani.com

kissekahani.com

kissekahani.com

संपादकीय

क्या 'पराग' का स्वरूप बदल गया है?

इस अंक के साथ 'पराग' के आकार-प्रकार और रंग-रूप में भारी परिवर्तन किया जा रहा है. कई दृष्टियों से यह परिवर्तन आवश्यक था.

'पराग' के पाठकों को अधिक सामग्री मिले, यह आवश्यकता एक अरसे से अनुभव की जा रही थी. इसका आकार-प्रकार बड़ा करने से यह संभव हो गया है. जुलाई '71 तक के आकार में 64 पृष्ठों में जितना कागज खपता था, उसके हिसाब से नए आकार में केवल 43 पृष्ठ दिए जाने चाहिए थे. किंतु अब सामान्य अंकों में इसके 52 पृष्ठ निश्चित किए जा रहे हैं. और फिर भी मूल्य वही रखा जा रहा है.

'पराग' लगभग अपने आरंभ-काल से ही उन घिसीपिटी लोक-कथाओं को प्रकाशित करने से कतराता रहा है, जो न केवल अनेक बार अन्य पत्र-पत्रिकाओं में छपी होती थीं, बल्कि पुस्तक रूप में भी आसानी से उपलब्ध थीं. यही नहीं, संपादकीय दृष्टि से, यह तथ्य भी सामने था कि ऐसी अधिकतर लोक-कथाएं भारतीय सामंती काल के उन नैतिक मूल्यों पर आग्रह रखती थीं, जो आधुनिक प्रजातंत्रीय जीवन में निरर्थक हो चुके हैं. उनसे आधुनिक यथार्थ से जूझने वाले अग्रगामी बच्चों और किशोरों में किसी आदर्श के प्रति आस्था उत्पन्न होना तो दूर रहा, वे उनके लिए पिछड़ेपन के प्रतीक बन कर रह गए.

'पराग' अपने पाठकों को आधुनिक समाज की झांकी देना चाहता था, और उनके अंदर एक ऐसी आधुनिक समझ-बूझ पैदा करना चाहता था, जो उनके मन में नए व संतुलित साहित्य के प्रति अनुराग जाग्रत कर सके. इस उद्देश्य की पूर्ति में 'पराग' ने पिछले वर्षों में आशातीत प्रगति की है. केवल कुतूहल के बल पर अपने पाठकों को बहलाने के स्थान पर, 'पराग' ने अनेक मार्के की सामयिक कथाएं किशोर पाठकों को दी हैं. अब नए रंग-रूप में 'पराग' इस दिशा में एक कदम और आगे बढ़ रहा है. हिंदी में पहली बार केवल किशोरों के लिए एक ऐसी सामाजिक कथा-प्रतियोगिता का आयोजन किया गया है, जिसकी पुरस्कार-राशि विस्तृत हिंदी साहित्य की प्रतियोगिताओं में भी दुर्लभ रही है.

वर्षों से 'पराग' के प्रबंधक व संपादक मंडल इस प्रयत्न में रहे हैं कि भारतीय किशोरों के लिए हिंदी में नए साहित्य की रचना हो, उसका एक लेखक वर्ग तैयार हो, और विशेष रूप से 'पराग' किशोरों का पत्र बने. अब जब एक ऐसा समर्थ लेखक-वर्ग बन गया है, जो किशोरों की दृष्टि से सोचने लगा है, और उनके लिए साहित्य-रचना में रत है, तो 'पराग' भी यह घोषित करने में अपने आप को समर्थ पाता है कि वह विशेष रूप से किशोरों का पत्र है. किंतु परिवर्तन की इस घोषणा से 'पराग' का संपादकीय विभाग स्वयं चमत्कृत नहीं है. इस नई घोषणा की अनेक ऐसी जिम्मेदारियां हैं, जिनकी ओर से हम सजग हैं. अभी भारतीय माता-पिताओं को किशोरों का एक अलग आयु-वर्ग मानने की आदत नहीं पड़ी है, यद्यपि इस वय के कारण जो समस्याएं उनके दैनिक जीवन में उत्पन्न होती रही हैं, उन्हें वे क्रोध व क्षोभ के साथ देखते-भुगतते रहे हैं—पर उनके हल उनके हाथ नहीं लगे.

'पराग' का संपादकीय विभाग यह भी अनुभव करता है कि जिस पाठक-वर्ग का प्रतिनिधित्व अपने कंधों पर ओटने का विचार उसने किया है, वह एक ऐसे शक्ति-पुंज का स्वामी है, जो असीम तेज से भरा है. यह वह वर्ग है, जो समय पड़ने पर और क्रुद्ध होने पर अपने जनक व जननी से, अपने गुरुओं से, परंपराओं से, राजनीतिक नेताओं से, समाज के कर्णधारों से तथा सदाचार के स्थापित मूल्यों तक से भारी विद्रोह कर बैठता है—यद्यपि इस से वह स्वयं भी कष्ट भोगता है और अपने बारे में सोचने वाले सब गुरु-जनों को भी अनजाने ही संकट में डाल देता है! मनोवैज्ञानिक इसको 'खतरनाक उम्र' करार देते हैं. ऐसे में 'पराग' के कालम उसे उपदेश देने की हिमाकत करें, यह तो संभव ही नहीं है. फिर भी, अनेक बार ऐसा अवसर आ सकता है, जब वे 'पराग' के प्रति ही क्रुद्ध हो जाएं! इस कठिनाई को हम जान-बूझकर अंगीकार करते हैं. 'पराग' ने उनका गुरु होने की अपेक्षा उनका साथी बनना ज्यादा पसंद किया है.

'पराग' के सम्मानित लेखक-लेखिकाओं से हमारा अनुरोध है कि वे किशोर-किशोरियों के यथार्थ जीवन से उनकी समस्याओं को खोज निकालें, और उन्हीं की दृष्टि से, उनका सही प्रतिनिधित्व करते हुए, उनके लिए विभिन्न विधाओं में सरस साहित्य की रचना करें, और इसमें जो नई कठिनाइयां उनके सामने आएं उनसे हतोत्साह न हों. ●

पराग

१६० वां अंक

अगस्त १९७१

अनुक्रमणिका

मुखपृष्ठ :

स्वतंत्रता दिवस का सिंगार : विद्याव्रत 1

सरस कहानियां :

टेलिविजन कांड : अवतारसिंह 4

चैम्पियन : सुषमा मल्होत्रा 12

खिलाड़ी और खिलाड़ी : शाहिद अब्बास 16

वह लड़की : मालती जोशी 28

अंगूठी की चोरी : अवध अनुपम 36

पापा को समझाओ सप्ताह : सत्यस्वरूप दत्त 42

चटपटी कविताएं :

एक दिवस वह भी आएगा : रजत शर्मा 10

अंग्रेजी का शौक : विनोद रस्तोगी 61

झूठी शान : पंकज गोस्वामी 61

आने दो बरसात : शांति मालवीय 61

मजेदार कार्टून कथाएं :

पुराणमल नवकुमार : शेहाब 20

छोटू और लंबू : शेहाब 32

बुद्धूराम : आबिद सुरती 39

विशेष लेख :

बांगला देश के लड़ाके : श्रीकांत त्रिपाठी 8

देश-विदेश के अनोखे त्योहार : श्रीकृष्ण 46

टिकटों की कहानी : जितेंद्रकुमार चतुर्वेदी 52

परिचर्चा :

वर्जित फल: जासूसी उपन्यास: मनहर चौहान 24

एक आकलन :

बंबई के किशोर (उच्च वर्ग) : देवेश ठाकुर 34

फिल्मी कोना :

राजेश खन्ना से एक भेंटवार्ता : हरीश तिवारी 48

स्थायी स्तंभ :

शीर्षक प्रतियोगिता-30 : 11

नई पुस्तकें : लक्ष्मीचंद्र गुप्त 41

रंग भरो प्रतियोगिता-110 : 55

उद्धरण प्रतियोगिता-34 : 58

संपादक: आनंदप्रकाश जैन

kissekahani.com

टेलीविज़न कांड

एक हंसोड़ कहानी

kissekahani.com

★ अवतार सिंह

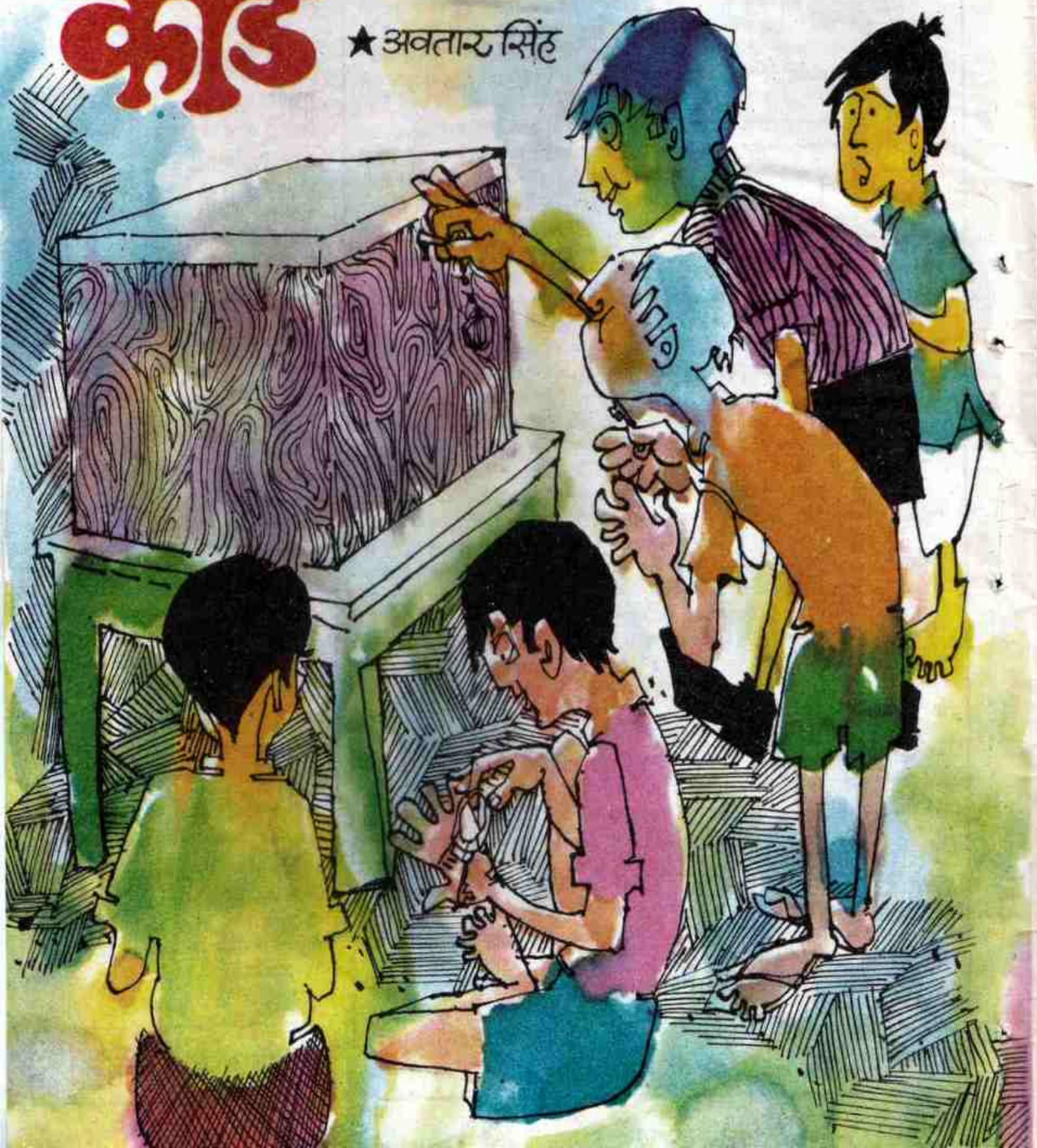

kissekahani.com

होस्टल की जनता का जीवन इस तरह शांति से बीत रहा था जैसे तालाब का ठहरा पानी. न जनता को वार्डन साहब से कोई शिकायत थी, न वार्डन साहब को जनता से. वार्डन साहब अपने क्वार्टर में बैठे प्रसन्न थे, जनता अपने-अपने कमरों में.

जैसे तालाब के किनारे एक टांग पर खड़ा बगुला यकायक अपनी लंबी चोंच जल में मारकर मछली पकड़ लेता है, वैसे ही वार्डन साहब भी होस्टल के किनारे अपने क्वार्टर में बैठे कभी-कभी होस्टल के तालाब में कंकर फेंक देते थे. दूध महंगा हुआ, तो उन्होंने लंच में मिलने वाले दही में पंद्रह प्रतिशत और रविवार को पकने वाली खीर में तैंतीस प्रतिशत कटौती कर दी; दीवाली से दो दिन पहले बड़ा-सा नोटिस लगवा दिया—होस्टल के अंदर पटाखेबाजी करने वाले लड़के पर बीस रुपया जुर्माना ठोका जाएगा. जब भी वार्डन साहब ऐसा कंकर फेंकते, होस्टल के शांत तालाब में हलचल मच जाती. लड़के भयभीत मछलियों की भांति बौखलाकर उछल-कूद मचाते, किंतु कुछ समय पश्चात् यह हलचल स्वयं ही शांत हो जाती. इसी तरह होस्टल का काम-काज चलता आ रहा था.

एक दिन वार्डन साहब को जाने क्या सूझा कि उन्होंने तालाब में कंकर की बजाए भूल से डायनामाइट फेंक दिया. इस डायनामाइट से होस्टल में ऐसी आग भड़की कि सदा अपनी पुस्तकों में डूबे रहने वाले लड़के भी वार्डन साहब के विरुद्ध नारे लगाने लगे.

घटना ऐसे घटी : होस्टल के कामन-रूम में एक प्यारा-सा टेलीविजन रखा था, जो लकड़ी के सुंदर केस में बंद था. केस की चाबी वार्डन साहब की जेब की शोभा बढ़ाती थी. शाम को छह बजे टेलीविजन पर प्रोग्राम शुरू होता था. उससे तीन मिनिट पहले चौकीदार वार्डन साहब से चाबी लाकर केस खोल देता था. प्रोग्राम समाप्त होने के तीन मिनिट बाद चौकीदार टी. वी. का केस बंद करके चाबी वार्डन साहब को लौटा आता था. कई बार वार्डन साहब को बाहर जाना होता, तो वह स्वयं ही चाबी चौकीदार को पकड़ा जाते. एक दिन वह किसी पार्टी में बाहर गए और भूलवश चाबी उनकी जेब में ही रह गई.

छह बजे से पहले ही कामन रूम में लड़कों की भीड़ जमनी शुरू हो गई. तीन मिनिट में ही होस्टल की आधी जनसंख्या वहां आ जुटी. टी. वी. के बिना सब यूं तड़प रहे थे, जैसे जल बिन मछलियां! टी. वी. केस में बंद रखा है और उसे देखा नहीं जा सकता. यह तो वैसी ही बात हुई कि शीशे के बक्से में गोल-गोल, चमचमाते रसगुल्ले बंद पड़े हैं और उन्हें खाया नहीं जा सकता. कितनी महान ट्रेजेडी है! हायर सैकंडरी के छात्र राकेश ने एक दूर की तरकीब सोची. उसके सुझाव पर बच्चों ने अपनी-अपनी चाबी केस में डालकर घुमानी शुरू कर दी. केस पहले तो चाबियों के इस आक्रमण का धीरता से सामना करता रहा किंतु एक और सौ का क्या मुकाबला! जब केस में छत्तीसवीं चाबी घूमी, तो उसने सिर झुकाकर अपनी हार स्वीकार कर ली. केस खुला और टी. वी. शुरू हो गया.

उधर पार्टी में वार्डन साहब ने रूमाल निकालने के लिए जेब में हाथ डाला, तो उनके हाथ में टी. वी. की चाबी आ गई. लड़कों को टी. वी. से कितना मोह है, यह उनसे छुपा न था. वह बीच पार्टी में से मेजबान की आंख बचाकर खिसके और तेज़ी से स्कूटर दौड़ाते हुए होस्टल में आ धमके. वहां उन्होंने देखा कि बच्चे कामन रूम में जुटे आनंद से टी. वी. देख रहे हैं.

वार्डन साहब ने विस्मित होकर चौकीदार से पूछा—"क्या तुम्हारे पास टी. वी. की डुप्लीकेट चाबी है?"

"नो, सर!"

"फिर टी. वी. का केस कैसे खुला?"

"सर, किसी लड़के ने अपनी चाबी से केस खोल लिया."

"किसने?"

"सर, सभी लड़कों ने बारी-बारी से अपनी चाबियां केस में डालकर ट्राई की थीं. केस किसकी चाबी से खुला, यह तो मैंने नोट नहीं किया."

वार्डन साहब को बच्चों पर बहुत क्रोध आया. कुछ तो इसलिए कि केवल टी. वी. खोलने के लिए ही वह बीच पार्टी से मेजबान की आंख बचाकर आए थे, कुछ इसलिए कि यदि लड़के अपनी इच्छानुसार टी. वी. खोल सकते हैं, तो वार्डन के पास केस की चाबी रहने की क्या तुक है! उन्होंने चौकीदार को आज्ञा देकर टी.वी. उठवाया और अपने क्वार्टर में रख लिया.

होस्टल की जनता में खलबली मच गई. दो दिन तक सारे लड़के अपने-अपने कलेजों पर एक-एक क्विंटल का पत्थर रखे बिस्तरों में करवटें बदलते रहे. टी. वी. देखे बिना उन्हें रात का खाना हज़म न होता था. बच्चों के कई डेपुटेशन वार्डन साहब से बातचीत करने गए किंतु हर बार बातचीत भारत-नेपाल व्यापार समझौते की तरह असफल रही. वार्डन साहब कुतुब मीनार की भांति अपने निश्चय पर अटल रहे!

तीसरे दिन जनता की सहनशक्ति अपनी सीमा पार कर गई. उस दिन डिनर के बाद होस्टल के पिछवाड़े में जनता की जनरल मीटिंग हुई. राकेश ने उनकी लीडरशिप

kissekahani.com

संभालते हुए मीटिंग का श्रीगणेश किया—"भाइयो, अब वार्डन साहब के बढ़ते हुए अत्याचार और अधिक सहन नहीं किए जा सकते. आप लोग भूले न होंगे कि पिछले महीने हमें लंच पर सौ ग्राम दही मिलता था, आज केवल पचासी ग्राम मिलता है. दूसरे शब्दों में—जो दही पहले दस जनों को मिलता था, अब एक हजार बटा पचासी यानी लगभग पौने बारह जनों में बंटता है. दही कम मिलने का सीधा प्रभाव हमारे दिमाग और स्वास्थ्य पर पड़ा है. मैं आप लोगों की दशा नहीं जानता, किंतु पिछले महीने जो पैराग्राफ रटने में मुझे दो मिनिट लगते थे, अब वह दस मिनिट में भी नहीं रटा जाता. हम दही कम खा सकते हैं, किंतु इधर वार्डन साहब ने टी. वी. उठाकर अपने क्वार्टर में रख लिया है; अब न वह स्वयं टी. वी. देखते हैं, न हमें देखने देते हैं."

सातवीं के किरण ने टोका—"यह गलत है. वार्डन साहब की छोटी मुन्नी से मुझे पक्की खबर मिली है कि वह स्वयं चुपके-चुपके कमरा बंद करके अकेले में टी. वी. देखते हैं."

"नहीं, भाइयो, वार्डन साहब टी. वी. नहीं देखते, क्योंकि टी. वी. का एरियल अभी भी कामन रूम की छत पर ज्यों का त्यों मौजूद है. किंतु उनकी इस हरकत से इतना तो स्पष्ट है कि यदि हमने शीघ्र ही उनके विरुद्ध कोई ठोस कदम न उठाया, तो हमारा होस्टल हॉस्पिटल बन जाएगा!"

योगेश चहका—"जबकि हम चाहते हैं इसे होटल जैसा बनाना!"

राजू ने कहा—"वह दिन दूर नहीं जब हमें स्कूल जाने के लिए भी वार्डन साहब की आज्ञा लेनी पड़ेगी! अभी भी हम फिल्म देखने जाएं, तो वार्डन साहब से पूछना पड़ता है. यह अत्याचार की सीमा है. अभी तक ऐसा अत्याचार केवल याह्या खान ने बंगला देश में किया है!"

किरण ने विरोध किया—"हम इसे अत्याचार नहीं कह सकते."

"क्यों?"

"इसलिए कि अत्याचार दो शब्दों की संधि से बना है—अति और अचार. अति अर्थात् अधिक अचार खाने से जीभ पर जैसी जलन होती है यदि किसी अन्य काम से वैसी ही जलन हो, तो वह अत्याचार कहलाएगा! और वार्डन साहब से फिल्म के लिए आज्ञा लेते समय हमें कोई जलन नहीं होती!"

सबने अत्याचार की इस नई परिभाषा पर तालियां पीटीं. 'वाह-वाह' का शोर मच गया. राकेश ने चेतावनी दी—"हम व्यर्थ की बातों में अपना अमूल्य समय नष्ट कर रहे हैं. होस्टल के निवासियों से मेरी प्रार्थना है कि वे टी. वी. से संबंधित बातें ही मीटिंग में रखें. हमारा मुख्य उद्देश्य टी. वी. वापस प्राप्त करना है."

योगेश ने सुझाव दिया—"इस काम के लिए सबसे सीधा-सादा हथियार है—हड़ताल! हमें तुरंत होस्टल में हड़ताल कर देनी चाहिए."

राकेश ने कठिनाई बताई—"यदि हड़ताल में पूरे होस्टल ने भाग न लिया, तो टी. वी. वापस मिलना तो एक तरफ, सारे स्कूल के स्टाफ में हड़ताल की खिल्ली और उड़ जाएगी. इसलिए हड़ताल करने से पहले यूनियन बनाना जरूरी है."

योगेश ने पूछा—"यूनियन का हड़ताल से क्या संबंध?"

"जो यूनियन का नेता होगा उसका सारे लोग कहना मानेंगे, तभी हड़ताल शत-प्रतिशत सफल होगी."

"यदि ऐसी बात है, तो हमें इसी दम एक नन्ही-मुन्ही, प्यारी-सी यूनियन बना लेनी चाहिए".

सब सहमत हो गए कि उन्हें अवश्य ही यूनियन बनानी चाहिए. यूनियन उनके स्वास्थ्य के लिए उतनी ही आवश्यक है, जितना जल और वायु. सबको विस्मय हुआ कि अभी तक वे बिना यूनियन के जीवित कैसे रह रहे थे!

राकेश ने चिंता प्रकट की—"प्रश्न उठता है कि यूनियन बनेगी कैसे? क्या हममें से किसी भाई ने पहले कहीं पर किसी किस्म की कोई यूनियन बनाई है? नहीं! तो इसके लिए मुझे किसी ऐसे प्रसिद्ध नेता के पास सलाह लेने के लिए जाना होगा, जिसे यूनियन बनाने का काफी अनुभव हो. फिलहाल हम अपनी यूनियन का नामकरण-संस्कार कर लें."

किरण ने तुरंत एक नाम सुझा दिया—"अरावली होस्टलर्ज यूनियन!"

राकेश ने नाक सिकोड़कर कहा—"जंचा नहीं. सुनकर लगता है जैसे किसी होस्टल के बेयरों की यूनियन हो. नाम ऐसा फड़कता हुआ होना चाहिए, जो तीर की तरह वार्डन साहब के कलेजे में जा लगे, वरना उनपर यूनियन का रोब न पड़ेगा".

मोटेराम ने गरजकर यूनियन का नया नाम दिया—"नैपाम बम यूनियन!"

●

यह धड़ाका सुनकर कई जनों ने घबराकर कानों पर हथेलियां रख लीं. मीटिंग में बैठा वार्डन साहब का कुत्ता डरकर बाहर दौड़ गया. राकेश बोला—"यह नाम आवश्यकता से अधिक भयानक है! नैपाम बम के डर से वार्डन साहब यूनियन के पास फटकेंगे ही नहीं, तो उनसे बातचीत कैसे होगी! मैं नाम सुझाता हूं—होस्टल स्टूडेंट्स यूनियन."

सबने इस नाम का एकमत से समर्थन किया. राकेश ने कहा—"नामकरण संस्कार के बाद आता है यूनियन का उद्देश्य. हमारी यूनियन का पहला काम होगा—वार्डन साहब से टी. वी. वापस लेना."

मोटेराम ने दूसरी गर्जना की—"हमारी यूनियन का दूसरा काम होगा लड़कों को होस्टल से बाहर जाने के लिए पर्याप्त छुट्टियां दिलवाना."

किरण ने तुरंत इस प्रस्ताव का पक्ष लिया—"हमें सप्ताह में एक लोकल लीव, एक शॉपिंग लीव, एक पिकनिक लीव, एक कैजुअल लीव, एक स्पेशल लीव और एक सिक लीव मिलनी चाहिए."

राजू ने शंका की—"तो हम होस्टल में किस दिन रहेंगे?"

किरण ने मेज पर मुक्का मारते हुए कहा—"होस्टल में रहना ही कौन चाहता है?" वहां उसके आगे मेज तो थी नहीं, मुक्का ऐन मोटेराम की खोपड़ी पर बैठा. वह दर्द से बिलबिला कर रह गया.

राकेश बोला—"मैं किरणचंद्र के सुझाव का पूरी तरह समर्थन करता हूं. इसमें केवल एक छुट्टी फालतू है—सिक लीव! सिक लीव लेकर हम होस्टल के बाहर नहीं जा सकते. यह लीव लेने पर कमरे में बंद रहकर बीमार होने की ऐक्टिंग करनी पड़ेगी, इसलिए सिक लीव का कोई लाभ नहीं."

मोटेराम ने उबासी लेते हुए कहा—"हमें स्कूल में लंच के बाद वाले घंटों में सोने की छुट्टी भी मिलनी चाहिए."

राकेश ने टेक्नीकल अड़चन बताई—"यूनियन केवल होस्टल की समस्याएं हल करेगी, स्कूल की नहीं."

राजू बोला—"मेरे विचार में यूनियन अपने उद्देश्य से दूर हट रही है. यूनियन का पहला कर्तव्य वार्डन साहब से टी. वी. वापस लेना है."

"बिलकुल, इसमें कोई संदेह नहीं कि यूनियन का पहला उद्देश्य टी. वी. वापस लेना है. किंतु कैसे? कौन बिल्ली के गले में घंटी बांधेगा? अभी हममें इतना साहस नहीं है कि वार्डन साहब के क्वार्टर पर जाकर धावा बोल दें और जबरदस्ती टी. वी. उठा लाएं."

योगेश बोला—"टी. वी. वापिस लेने का एक ही उपाय है, हम में से किसी एक छात्र को अपना बलिदान करना पड़ेगा."

"क्या मतलब?" कई भयभीत आवाजें एक साथ उभरीं.

"आप लोग गलत समझे. मेरा मतलब यह नहीं था कि किसी को सचमुच ही बलिदान देना पड़ेगा. हमें एक ऐसा छात्र चाहिए जो हमारे अधिकारों की रक्षा के लिए वार्डन साहब के क्वार्टर के लॉन में आमरण अनशन करने की धमकी दे सके!"

सबके चेहरे फीके पड़ गए. कोई भी अपने प्राण दांव पर लगाने को तैयार न था. राकेश

kissekahani.com

ने उन्हें साहस बंधाया—"आमरण अनशन इतना भयानक नहीं जितना सुनने में लगता है. आप सबने देखा ही होगा कि हमारे देश में समय-समय पर जगह-जगह नेता लोग आमरण अनशन करते रहते हैं, किंतु आज तक किसी का बाल भी बांका न हुआ. सबसे बड़ी बात तो यह है कि अनशनधारी को स्कूल नहीं जाना पड़ेगा. उसके लिए ट्रांजिस्टर और कहानियों की पुस्तकों का प्रबंध किया जाएगा. जहां तक संभव होगा वार्डन साहब की आंख बचाकर उसके लिए रात में शानदार भोजन की भी व्यवस्था की जाएगी."

कोई भी महारथी इन लटकों में न फंसा. मोटेराम ने राकेश को सुझाव दिया—"यह महान कार्य तो आप ही सम्पन्न कर सकते हैं."

राकेश हड़बड़ा गया—"ब . . . . बात यह है कि मैंने कभी अनशन ही नहीं किया, आमरण अनशन तो दूर की बात है. मुझे अनशन पर बैठते शर्म आती है!"

मोटेराम बोला—"तो आप खड़े होकर अनशन रख लीजिए!"

इसपर खूब जोर का ठहाका लगा. राकेश झेंप गया.

आमरण अनशन के लिए कोई तैयार न हुआ, तो सब बंद, आत्मदाह, मोर्चा, बायकाट आदि अन्य हथियारों का प्रयोग करने के विषय में भयंकर बहस हुई, किंतु सबमें एक भारी अड़चन यह थी कि कोई भी लड़का अपने अधिकारों की रक्षा के लिए पहल करने को तैयार न था.

किरण ने राह दिखाई—"आजकल बंगाल में घेराव करने का फैशन चला हुआ है. वार्डन साहब का घेराव करना कैसा रहेगा?"

यूनियन के सारे सदस्य प्रसन्नता से उछल पड़े. घेराव करने में किसी एक के प्राणों को कोई संकट न था. मोटेराम ने पूछा—"घेराव का क्या अर्थ होता है?"

किरण ने बताया—"घेराव अर्थात् घेरना. हम वार्डन साहब को चारों ओर से घेर लेंगे और उन्हें टी. वी. वापस देने पर विवश कर देंगे."

मोटेराम ने शंका की—"यदि वार्डन साहब हम पर छड़ी लेकर पिल पड़े, तो?"

"तो हम मर मिटेंगे, किंतु टी. वी. वापस लिये बिना घेरा नहीं तोड़ेंगे. देखा नहीं, बंगला देश की जनता ने अपने अधिकारों के लिए टैंकों और बमों की भी परवाह नहीं की!"

मोटेराम ने घबराकर कहा—"टैंक-वैंक से तो मैं भी नहीं डरता, किंतु वार्डन साहब ने गाल पर चांटा धर दिया, तो . . . ?"

राकेश ने दो-टूक उत्तर दिया—"तो आपको अपना दूसरा गाल भी वार्डन साहब की सेवा में अर्पित कर देना होगा!"

"चांट खाने के लिए?"

"बिलकुल चांटे खाने के लिए—"

सदुपयोग—

"मम्मी, तुम्हीं बताओ, क्या करूं? जिस दिन से बरसाती जूते और छतरी खरीदी है, बारिश ही नहीं हुई . . . आखिर इनका उपयोग तो करना ही था!"

सर्वसम्मति से निर्णय हो गया कि चाहे वार्डन साहब उनपर छड़ियों, मुक्कों, चांटों की वर्षा ही क्यों न कर दें, घेरा नहीं तोड़ा जाएगा."

किरण बोला—"जब हम इतना रिस्क ले रहे हैं, तो वार्डन साहब का घेराव कर हम उनके घर से टी. वी. का जबरदस्ती 'हीजैक' (अपहरण) क्यों न कर लें?"

राकेश ने निर्णय दिया—"नहीं, टी. वी. वापस लेने के लिए केवल शांतिपूर्ण उपाय प्रयोग में लाए जाएंगे."

सहसा यूनियन का सदस्य योगेश, जो तीन मिनिट पहले मीटिंग में से उठकर चला गया था दौड़ता हुआ वापस आया और हांफते हुए बोला—"ब . . . . . वार्डन . . . . . !"

राकेश ने घबराकर पूछा—"क्या वार्डन साहब इधर तशरीफ ला रहे हैं? उन्हें इस मीटिंग की खबर किसने दी ?"

यूनियन के सदस्यों की दशा देखने योग्य हो गई. सबके चेहरों पर मुर्दनी छा गई. सब वहां से भागने की योजना बनाने लगे. मोटेराम जो भाग नहीं सकता था, वार्डन साहब से बचने का बहाना सोचने लगा.

तभी योगेश ने बात पूरी की—"वार्डन साहब ने टी. वी. कामन रूम में वापस रखवा दिया है. होस्टल के सारे जने टी. वी. पर फिल्म देख रहे हैं!"

एक पल के लिए तो सदस्यों को जैसे सांप सूंघ गया. दूसरे क्षण यूनियन के सदस्य 'हिप-हिप-हुर्रा' का नारा लगाते हुए उठ खड़े हुए और अपनी सारी योजनाएं भूलकर कामन रूम की तरफ दुम दबाकर दौड़ पड़े. ●

अरावली, आई. आई. टी., नई दिल्ली-29.

kissekahani.com

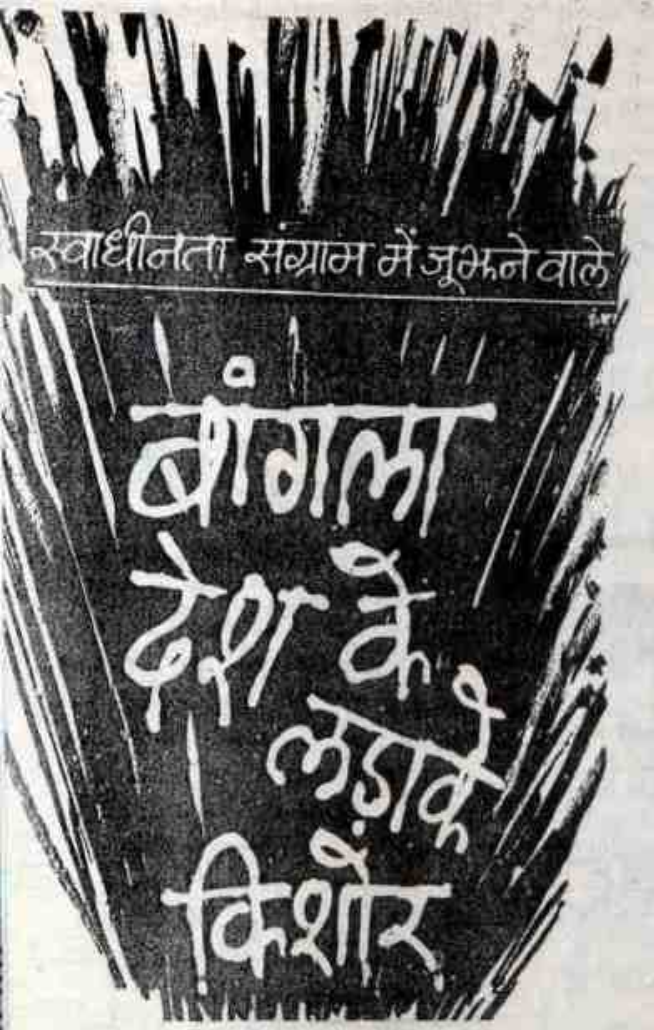

— श्रीकांत त्रिपाठी —

पश्चिम पाकिस्तान द्वारा पूर्व बंगाल के अमानुषिक शोषण के खिलाफ शेख मुजीबुर्रहमान के नेतृत्व में 'स्वतंत्र बांगला देश' की आवाज बुलंद हुई, तो पाकिस्तान के निरंकुश शासक याह्या खान ने भीषण नरसंहार का शर्मनाक रास्ता अपनाया! मुक्ति-आंदोलन के समर्थकों ने डटकर मुकाबला किया. यह मुक्ति-संग्राम अभी भी जारी है और गुरिल्ला-युद्ध का रूप ले चुका है, और भारत स्वयं वहां से आए पचासों लाख शरणार्थियों के भरण-पोषण की विराट समस्या से जूझ रहा है. किशोर पीढ़ी के जिन जांबाजों ने बांगला देश की आजादी की बलिदेवी पर अपने प्राणों की भेंट चढ़ाई, उनकी अमर गौरव-गाथा के ये कुछ प्रसंग हम अपनी किशोर पीढ़ी को भेंट कर रहे हैं!

—संपादक

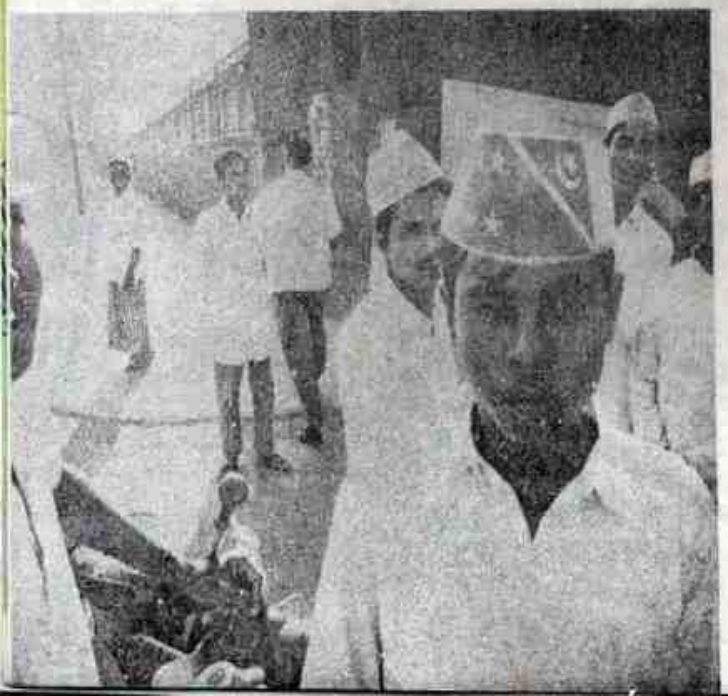

नाम था उसका रोशनआरा बेगम. उम्र यही करीब 18 के आस-पास. मझोला कद, इकहरा शरीर, खुलता हुआ गेहुंआ रंग, स्वाभिमान से दीप्त आंखें और चेहरे पर अठखेलियां करती हुई ताजगी—बस कुल मिलाकर यही उसका हुलिया था. ढाका महिला कालेज की छात्रा थी वह. अभी इसी वर्ष कालेज में प्रवेश लिया था उसने. तब तक स्वतंत्र-सार्वभौम बांगला देश की घोषणा हो चुकी थी और उसी के साथ 25-26 मार्च की आधी रात से याह्या खां के फौजी दरिंदों ने बांगला देश की निहत्थी और निर्दोष जनता पर कहर ढाना भी शुरू कर दिया था. भीषण नरमेध चल रहा था. सामूहिक कत्लेआम जारी था. राजधानी ढाका की सड़कें लाशों से पाट दी गई थीं. चारों ओर खून के पनाले बह रहे थे. बमवर्षकों की दिल दहला देने वाली भीषण गड़गड़ाहट, मशीनगनों से दनदनाती गोलियां, सड़कों पर गश्त करते टैंकों की गर्जना और तोपों की धांय-धांय! और इस सब के बीच सहायता

जिन हाथों में चूड़ियां शोभा देती हैं, उन्हीं हाथों में बंदूक लेकर दुश्मन से मोर्चा लेने का अभ्यास करती हुई राजशाही क्षेत्र की एक वीर बाला! (फोटो : प्रबीरकुमार).

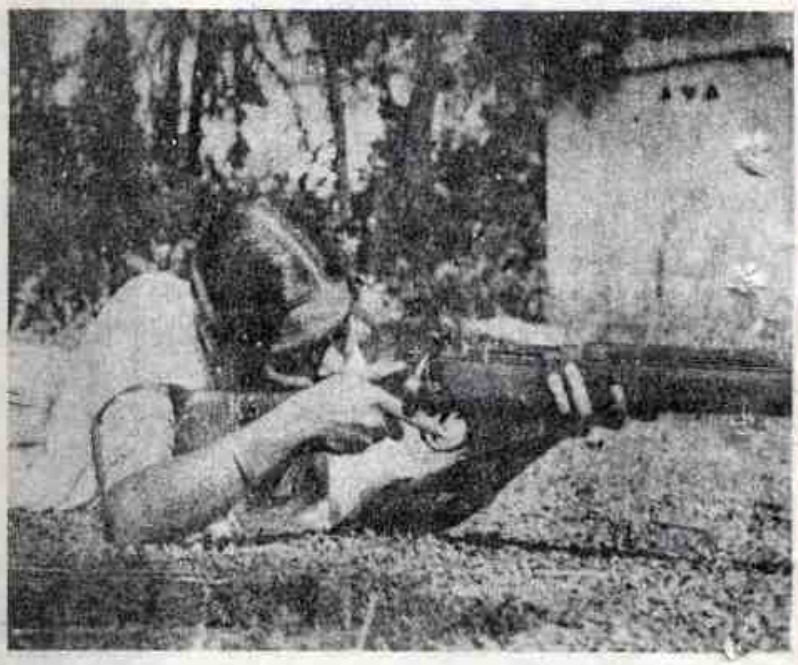

के लिए घायलों की चीख-पुकारें, करुण आर्तनाद!

पाकिस्तानी फौजियों ने ढाका विश्वविद्यालय को पूरी तरह नेस्तनाबूद कर दिया था. अध्यापकों और छात्रों को कतारों में खड़ा कर उन्हें गोलियों से भून दिया गया. और अब उस महिला कालेज की बारी थी—रोशनआरा बेगम जिस कालेज की छात्रा थी. देखते-देखते कालेज के चारों ओर मजबूत मोर्चाबंदी कर ली गई. फौजियों के बमवर्षक ऊपर मंडरा रहे थे, तो नीचे कालेज प्रांगण में टैंकों का काफिला था. जाहिल फौजियों ने छात्रावास में खुलकर लूटपाट मचा रखी थी. कमरों से लड़कियों को घसीट-घसीटकर बाहर मैदान में लाया जा रहा था. अध्यापिकाओं को देखते ही गोली मार दी जाती थी. इस प्रकार कई सौ लड़कियों को उस मैदान में इकट्ठा किया गया. चारों ओर चमचमाती संगीनों का कड़ा पहरा लगा दिया गया. तभी एक अधिकारी आता है और दूसरे के कान में फुसफुसाकर कुछ कहता है. बस, भयभीत लड़कियों के झुंड में से कुछ लड़कियों को अलग किया जाने लगता है. इस प्रकार लगभग 50 छात्राएं अलग छांटकर पल्टन की गाड़ियों में भर दी गईं और गाड़ियां फौजी छावनी की ओर रवाना हो जाती हैं. शेष बची

ये हैं बांगला देश के वे जांबाज नौजवान जिन्होंने मार्शल ला प्रशासन के समय कारखानों और सरकारी कार्यालयों का सारा काम-काज ठप्प कर दिया था!

kissekahani.com

छात्राओं को कतार में खड़ी होने का हुक्म मिलता है, और दूसरे ही क्षण धांय. . .धांय की आवाजें गूंजती हैं . . . और पूरा का पूरा दृश्य एक खौफनाक मरघट बन जाता है!

छात्रावास की ऊपरी मंजिल में रहने वाली कुछ लड़कियों से यह न देखा गया. उन्हें पाकिस्तानी राक्षसों के हाथ कुत्ते की मौत मरना कबूल न हुआ. लगभग 50 का झुंड छत पर गया—सबसे ऊपर. एक साथ सुरीली किंतु तीखी आवाज गूंजी—'जय बांगला'. . .और दूसरे ही पल धड़ाम्. . . धड़ाम्! सभी लड़कियों ने छत से कूदकर दम तोड़ दिया, किंतु जीते-जी पाकिस्तानी दुष्टों के स्पर्श से अपने शरीर को अपवित्र नहीं होने दिया.

उन्हीं कमरों में से एक में थी रोशनआरा बेगम. उसने भी यह सब देखा—खूबसूरत लड़कियों को छांटकर छावनी भेजा जाना, कतार में खड़ाकर गोलियों से भून दिया जाना, और बहादुर लड़कियों द्वारा छत से कूदकर आत्महत्या कर लेना. किंतु उसे इन तीनों मौतों में से कोई भी मौत पसंद न आई. दिमाग में एक नई योजना कौंध गई. उसने ऊपर ही पड़ोस के घर से एक मुक्ति सैनिक से संपर्क स्थापित किया और किसी तरह एक बारूदी सुरंग तथा दो हथगोले प्राप्त कर लिये. सुरंग और एक हथगोले को अपनी चोली में छिपाया और दूसरा हथगोला हाथ में लिया. इतना सब पलक झपकाते हो गया, और वह चुपचाप छात्रावास से नीचे उतरी. इधर-उधर निगाह दौड़ाई. गेट के पास खड़ा एक टैंक पड़ोस की बस्ती में गोले बरसा रहा था. बस फिर क्या था! वह तेजी से टैंक की ओर लपकी. कुछ फौजियों ने तुरंत उसका पीछा किया. लेकिन उनकी गिरफ्त में आने से पहले वह टैंक से जा टकराई! और एक आवाज गूंजी—धड़ाम्. टैंक उड़ चुका था और उसके टुकड़े चारों ओर छितरा गए थे. टैंक में बैठे फौजियों के हाड़-मांस का भी पता नहीं था और इसके साथ रोशनआरा भी मरकर अमर हो गई थी!

यह कहानी टीटू की है, जो दसवें दर्जे का विद्यार्थी था. स्थान बोगरा कस्बा. तिथि 11 अप्रैल.

टीटू को ज्यों ही खबर लगी कि रंगपुर में भीषण जुल्म ढाने तथा उसे उजाड़ देने के बाद पाकिस्तानी फौज अब बोगरा की ओर तेजी से बढ़ रही है, तो उसने अपने दोस्तों को इकट्ठा करना शुरू किया. एक-एक करके लगभग 20 किशोर देखते-देखते एक जगह जमा हो गए. सभी गहरे दोस्त थे—हमेशा साथ रहने वाले. तब भला संकट के समय एक साथ क्यों न होते? टीटू ने मांग-जांच कर एक पिस्तौल की व्यवस्था की और बीसों किशोर पुलिस अधीक्षक (सुपरिंटेंडेंट) के घर जा धमके. पुलिस अधीक्षक पश्चिम पाकिस्तान का था. इसके पहले कि वह संभल पाता, टीटू ने उसकी छाती पर अपनी पिस्तौल अड़ा दी और कड़ककर बोला कि बंगाली पुलिस उप-अधीक्षक के नाम तुरंत एक चिट्ठी लिखो कि 'सरकारी मालखाने का सारा गोला-बारूद और हथियार वगैरह फौरन हटा लिये जाएं.' जान बचाने की गरज से उस पुलिस अधीक्षक को बंगाली अधिकारी के नाम चिट्ठी लिखनी पड़ी.

ढाका की इन बंदूकधारी छात्राओं को क्या पता था कि एक दिन उनके विश्वविद्यालय को ही याह्या के नर-पिशाच सैनिक मटियामेट कर देंगे!

बांगला देश में हुए कत्ले-आम के प्रति आक्रोश प्रकट करने के लिए कलकत्ता के छात्रों द्वारा आयोजित प्रदर्शन!

वे तुरंत भागकर मालखाने आए और उक्त बंगाली उप-अधीक्षक से संपर्क स्थापित करके उन्होंने सारा मालखाना खाली करवा लिया. बस अब क्या था, टीटू और उसके साथियों को मुंहमांगी मुराद मिल गई. मनों गोला-बारूद तथा सैकड़ों राइफलें टीटू एंड कंपनी के हाथ लगीं, जिन्हें उन्होंने स्वयं अपने तथा अन्य मुक्ति सैनिकों में तुरत बांट दिया और कस्बे के किनारे उस सड़क पर जा डटे, जहां से पाकिस्तानी फौजों के आने की संभावना थी.

पाकिस्तानी फौजियों को क्या पता था कि इस बोगरा कस्बे में भी कोई लड़ने वाला है! वे तो निश्चित धड़धड़ाते चले आ रहे थे. वे अभी कस्बे के चुंगीघर तक ही आ पाए होंगे कि अचानक तीन ओर से गोलियां बरसनी शुरू हो गईं. देखते-देखते सैकड़ों पाकिस्तानी धराशायी हो गए. जो बच गए वे बड़ी मुश्किल से पीछे लौटे. उनके साथियों की लाशें वहीं पड़ी रहीं. फिर कुछ घंटों बाद पाकिस्तानी फौज फिर अपनी पूरी ताकत के साथ हमला करते हुए आगे बढ़ी. किंतु टीटू एंड कंपनी के आगे उसकी कुछ न चल सकी. लगभग 60 मिनिट तक दोनों ओर से घमासान गोलीबारी हुई. इसी बीच एक गोली टीटू की छाती बेधती हुई निकल गई और आह करके वह जमीन पर तड़पने लगा. जख्म इतना गहरा था कि सैकिंडों में 'जय बांगला' की आवाज के साथ उसके प्राण-पखेरू उड़ गए!

kissekahani.com

एक दिवस वह भी आएगा

जब कभी ओलों की बौछारों से
वर्षा की तीखी मारों से
मेरे उपवन के पुष्प मुरझा जाते हैं,
मेरे मस्तिष्क में तूफान उभर आते हैं,
कभी कभी स्वयमेव ही जब मेरी दृष्टि
घर की दीवारों की ओर उठ जाती है,
देखता हूँ कि फौजी वर्दी में
एक छिपकली दौड़-दौड़ कर
कीट पतंगों को अपना आहार बनाती है!
और मैं अनुभव करता हूँ
आधुनिक चंगेज, औरंगजेब याह्या को जो
बंग बंधुओं को इंद्र लोक पहुंचाते
और स्वयं के लिए नरक में स्थान बनाते!

और फिर जब क्रोध में अनुज द्वारा फेंका दर्पण
क्षत-विक्षत हो जाता है,
मैं समझ जाता हूँ कि इसी प्रकार
लाखों शेख मुजीबों
का देश-प्रेम कुचला जाता है!

यूं ही दिवस ढल जाते हैं
और एक दिवस जब मेरी दृष्टि
शून्य में विचरण करती है
और मेरे हृदय में
विचारों का नवीन संस्करण भरती है;
लगता है कि जब फूलों के मुरझाने का,
और दर्पण के टुकड़े हो जाने का
मेरे लिए महत्व नहीं है,
तो लाखों के मर जाने से
पड़े-पड़े लाशों के सड़ जाने से
हिंसा के सीमा पार कर जाने से
या फिर विस्थापितों के भाग आने से
विश्व को अपनत्व क्यों हो?

फिर भी मेरा विश्वास अटल है
एक दिवस वह भी आएगा,
जब इस छिपकली को अपच हो जाएगा!
इसका भी मरण दिवस तो आएगा!
तब मेरे उपवन में बसंत फिर लहराएगा,
कुम्हलाए पौधों में भी फूल खिलेंगे नए नए
और जुड़ जाएँगे दर्पण के वे टूटे टुकड़े,
जो निर्ममता के हाथों ये टूट गए!

—रजत शर्मा
(कक्षा 10, आयु 13 वर्ष)

लेकिन इस मृत्यु में भी टीटू को गर्व था. मरते वक्त एक गहरा संतोष उसके चेहरे पर झलक रहा था, क्योंकि मरने से पहले खुद उसने अपनी ही राइफल से छह पाकिस्तानी दरिंदों को मौत के घाट उतार दिया था. फिर सबसे बड़ी बात तो यह थी कि उसने दुश्मन की गोली छाती पर खाई थी, पीठ पर नहीं!

उस समय रंगपुर में हाहाकार मचा हुआ था. चारों ओर लूट-पाट, हत्या, आगजनी, बलात्कार का दौरदौरा था! रंगपुर का रूपाली सिनेमा, जो कभी रौनक का केंद्रस्थल था, आज बिल्कुल वीरान दिखाई दे रहा था. जिधर देखो उधर औरत-मर्द-बच्चे भागते नजर आते थे और उसका पीछा करते हुए पाक फौजियों के बूटों की खटपट! फौजियों ने भागती हुई भीड़ में से एक 13 वर्षीय किशोर को पकड़ लिया और संगीनों से डरा-धमकाकर उसे उस चिकने ध्वज-स्तंभ पर चढ़ने को मजबूर किया, जो सिनेमा हाल के मुख्य द्वार पर लगा हुआ था.

फिर उन्होंने उक्त बालक को एक काला झंडा देकर स्तंभ पर फहराने का हुक्म दिया. बेचारा भोला किशोर इसके पहले कभी इस प्रकार के चिकने खंभों पर चढ़ा नहीं था, किंतु भयवश उसने चढ़ना प्रारंभ किया. बहुत बार ऊपर तक पहुंच जाता, किंतु जरा से झटके में ही फिर फिसलकर नीचे आ जाता. खैर! बड़ी मुश्किल से किशोर ने उक्त झंडा स्तंभ पर फहरा दिया और बड़े इत्मीनान से फौजियों की ओर मुस्कराकर ऊपर से ही बोला—"हुजूर! मैंने काम पूरा कर लिया."

किंतु उस मासूम किशोर को कहां मालूम था कि यह सब नाटक पाकिस्तानी दरिंदों के लिए केवल एक पल का मनोरंजन मात्र था. बालक ने निश्चित होकर सगर्व नीचे उतरना प्रारंभ किया. किंतु इसी बीच एक आवाज कौंधी. . . धांय. . . . और फिर उसी के साथ दूसरी. . . .धड़ाम्!

बालक कटी हुई डाल की तरह फर्श पर था और उसके प्राण-पखेरू उड़ चुके थे.

अभी दो घंटे पहले उसके घर में शहनाइयां बज रही थीं. चारों ओर धूमधाम और खुशी का नजारा था. होता भी क्यों न? युवा मुक्ति-सेनानी शराफतउद्दीन की शादी जो थी. शराफत खुद मेहमानों का घूम-घूम कर स्वागत कर रहा था. सब तरफ हंसी-मजाक चल रहा था.

अभी-अभी शराफतउद्दीन फेनी सेक्टर से लौटा था, दुश्मन को पीछे खदेड़कर. वह मुक्ति सेनानी था, इसलिए पिछले तमाम दिनों से सारा समय दुश्मन से लड़ने में ही बीता था उसका. जब फेनी के मुख्यालय में बांगला देश का सुनहरा ध्वज फहराने लगा, तो शराफत को कुछ राहत मिली. तब तक घर से सैकड़ों बुलावे आ चुके थे. अतः वह घर वालों का मन रखने के लिए गांव आ गया, शादी करने.

निकाह पढ़े अभी मुश्किल से दो घंटे ही गुजरे होंगे कि रणभूमि से खबर आई कि फेनी पर दुश्मन ने फिर से नए सिरे से, भारी पैमाने पर हमला बोल दिया है. भला इस खबर को सुनकर शराफत घर में बैठा रहता, यह कैसे मुमकिन था! यद्यपि वह अभी नई नवेली दुल्हन से बात करना तो दूर रहा, ठीक से उसका चेहरा भी तो न देख सका था, किंतु उसे तो कर्तव्य पुकार रहा था. बस बिना एक क्षण का विलंब किए वह युद्धभूमि की ओर रवाना हो गया.

और कुछ दिन बाद घर में खबर आई कि दुश्मन से लड़ते हुए शराफत शहीद हो गया!. . . . और उसकी बीवी को अपने शौहर की मिट्टी के अंतिम दर्शन तो दूर उसकी कब्र का भी पता न चल सका, जिस पर वह श्रद्धा के दो फूल भी चढ़ा सकती! ●

12, कोलाबा चेंबर्स,
बंबई-5.

kissekahani.com

शीर्षक प्रतियोगिता नं. 30

छाया:
वी. जी. दलाल

शीर्षक बताइए

दायीं ओर के चित्र को देखिए और जरा सोचकर इसका एक बढ़िया और फड़कता हुआ शीर्षक बताइए. अपने उत्तर एक सब से अलग पोस्ट कार्ड पर लिखकर हमें 20 अगस्त तक भेज दीजिए. सबसे बढ़िया शीर्षक पर दस रुपये के मूल्य की पुस्तकें पुरस्कार में मिलेंगी. हां, कार्ड पर अपना नाम और पता लिखना मत भूलिए. शीर्षक के कार्ड इस पते पर भेजिए : संपादक, 'पराग' (शीर्षक प्रतियोगिता-30), 10 दरियागंज, दिल्ली-6.

शीर्षक प्रतियोगिता-27 का परिणाम

पुरस्कार विजयी शीर्षक :

मां की ममता का यह जल,
कितना निर्मल, कितना उज्ज्वल!

प्रेषक :

शंभूदयाल राम पाला, डाकघर टडियावां, जिला हरदोई (उ.प्र.).

kissekahani.com

देहरादून एक्सप्रेस प्लेटफार्म पर लगी थी. एक कंपार्टमेंट में दो जने बैठे थे. हमारी टीम ने धड़ल्ले से उसी कंपार्टमेंट पर हमला बोलकर कब्जा कर लिया. हम 'सेंट थामस इंटर स्कूल्स एथलेटिक मीट' में भाग लेने देहरादून जा रही थीं. उत्तर प्रदेश, पंजाब और दिल्ली में कुल मिलाकर सेंट थामस स्कूलों की सात शाखाएँ हैं. आए वर्ष किसी एक स्कूल में तीन दिन की 'एथलेटिक मीट' होती है. इसमें सातों स्कूल भाग लेने आते हैं. इस वर्ष इस 'मीट' के लिए देहरादून का स्कूल चुना गया.

सहारनपुर तक का रास्ता खिड़की के पास वाली सीटों के लिए लड़ते-झगड़ते, टीचर की मीठी झिड़कियां सुनते, पीछे दौड़ते पेड़-पौधे देखते कट गया. सहारनपुर गाड़ी आधा घंटा ठहरती थी. हम जलपान के लिए नीचे उतरीं कि हमारा सामना अमृतसर के सेंट थामस स्कूल की टीम से हो गया. वह अमृतसर एक्सप्रेस से सहारनपुर आई थी और आगे भी उसे देहरादून एक्सप्रेस में बैठना था. दोनों टीमों की बीस लड़कियां उस छोटे से कंपार्टमेंट में खचाखच ठुंस गईं. छोटा-सा सफर था; जिसको जहां जगह मिली, समा गई.

प्रत्येक स्कूल की अस्सी प्रतिशत टीम वही होती है जो पिछले वर्ष आई होती थी. केवल दो या तीन चेहरे नए होते हैं. अधिकांश लड़कियां आपस में पहले ही परिचित होती हैं. उनकी टीचर नई थी. हमारी टीचर ने उनसे मेरा परिचय कराया—"हमारी टीम की कैप्टन सुषमा... पिछले चार वर्षों से एथलेटिक चैम्पियन."

उनकी टीचर ने मेरी पीठ थपथपाकर कहा—"कीप इट अप दिस टाइम आल्सो!"

"थैंक्स, मैडम!" मैंने कहा. उनकी शुभ-कामना की मुझे आवश्यकता न थी. जो चार वर्ष से चैम्पियन चली आती है, इस वर्ष भी बनेगी ही.

उनकी टीचर ने अपनी टीम की कैप्टन का परिचय दिया—"शमीम.... इसने इसी वर्ष स्कूल में एडमिशन लिया और आते ही 'एथलेटिक क्वीन' बन बैठी!"

मैंने शमीम की ओर देखा, छोटी-छोटी आंखें, चेहरे पर चेचक के हल्के-हल्के दाग जो पाउडर की पर्त में छुपे थे, नाक ऐसी जैसे आकाश की ओर उठी दुनाली एंटी-एयरक्राफ्ट गन! उसे किसी भी तरह सुंदर नहीं कहा जा सकता था. अकारण मुझे चिंता लगी कि बेचारी की शादी कैसे होगी. शादी के लिए तो लड़की का सुंदर होना बहुत जरूरी है न.

यकायक मेरे दिमाग में एक विचार कौंधा कि शमीम नाम तो मुसलमानों का होता है. मुसलमान ही तो है, वरना नाक में रिंग क्यों पहनती? शादी से पहले नाक में रिंग पहनने का रिवाज हमारे यहां थोड़े ही होता है. मुसलमान है और सुंदर नहीं है, आश्चर्य है. हमारी क्लास में भी एक मुसलमान लड़की है—इस्मत. बिलकुल अंग्रेज लगती है. हमने उसका नाम 'विलायती मेम' रख छोड़ा है. मुसलमान लड़कियां तो सुंदर होती ही हैं, फिर यह शमीम?

सहारनपुर के बाद चढ़ाई के कारण देहरादून एक्सप्रेस पैसेंजर बन जाती है, हर स्टेशन पर रुकती, सांस लेती चलती है. एक जगह गाड़ी बहुत ही धीमी चलने लगी, तो हमारी टीचर ने कहा—"यह रेलगाड़ी है कि बैलगाड़ी?"

इस पर एक लड़की ने रिमार्क कसा—"मैडम, इस समय गाड़ी पैदल चल रही है!"

दूसरी बोली—"इसमें गलती से कोई विंटेज इंजन जुड़ गया लगता है!"

पूरा कंपार्टमेंट हंसी से खिलखिला उठा.

उनकी टीचर ने कहा—"गाड़ी कैसे चलती है, यह शमीम बताएगी. शमीम गाड़ी की आवाज की बहुत अच्छी नकल निकालती है. क्यों, शमीम?"

शमीम पहले तो शरमाती-सकुचाती रही. जब लड़कियों ने जोर दिया, तो वह गाड़ी की आवाज निकालने के लिए तैयार हो गई. भूमिका के तौर पर बोली—"पहले मैं आपको पैसेंजर गाड़ी की चाल बताती हूं—जैसे यह बेचारी देहरादून एक्सप्रेस सरक रही है—

छुकछुक, छुकछुक, छुकछुक, छुकछुक,
धकधक, धकधक, धकधक, धकधक,
आओ सारे, छह छह पैसे,
पास हमारे, दे दे पैसे,
कानपुर आवा, कानपुर आवा,

★ सुषमा मल्होत्रा

चल इटावा, चल इटावा,
कूऊ ऊ ऊ ऊ....."

शमीम का कंठ सुरीला था. उसने शब्दों को इस तरह लय में बांधकर तेजी से बोला कि शब्द अपना अर्थ खो बैठे और पटरी पर सरपट दौड़ती रेल की आवाज कान में गूंजती रह गई. आखिर में जो उसने लंबी सीटी मारी, उसमें तो कमाल ही कर दिया. उसकी सीटी सुनकर एक बारगी इंजन के भी कान खड़े हो गए होंगे कि गाड़ी में मेरा दूसरा भाई-बंधु कैसा? खूब तालियां पिटीं.

शमीम उत्साह में भर गई. बोली—"जब देहरादून एक्सप्रेस बंबई से छूटती है, तो इसमें स्टीम इंजन नहीं, दो हजार हार्स पावर का डीजल इंजन जुड़ता है. डीजल इंजन एक के बाद एक स्टेशन छोड़ता हुआ इतनी तेज गाड़ी दौड़ाता है कि पटरियों के 'गैप' से होने वाली ठकठक एकतार बजने लगती है. कैसे—

छन-छना-छन, छन-छना-छन,
खन-खना-खन, खन-खना-खन,
समझा क्या है घर के नौकर,

kissekahani.com

चैम्पियन

kissekahani.com

एक कहानी स्पर्द्धा की

मोरी में आओ मुंह धोकर,
नहीं रुकूंगी, नहीं रुकूंगी,
हवा की परतें चीर चलूंगी."

बिलकुल ऐसी आवाज जैसे कोई तेज गाड़ी खटाखट एक सौ बीस किलोमीटर प्रति घंटा की रफ्तार से दौड़ती आ रही हो. हम यह सोचे बैठे थे कि शमीम ने कुछ लाइनें रट ली हैं और उन्हें ही सुना देती है. उनकी टीचर ने बताया कि हर सप्ताह मीटिंग में शमीम गाड़ी की आवाज निकालती है और हर बार तुरंत अपने मन से नई लाइनें जोड़ती है. इसका प्रमाण भी मिल गया. हमारे ग्रुप की हाई जंपर कैलाश ने उसे चैलेंज किया—"शमीम, मालगाड़ी की आवाज निकालो तो जानें!"

शमीम ने कहा—"मालगाड़ी! मालगाड़ी तो मैंने कभी चलाई ही नहीं." उसकी बात पर ठहाका लगा. एक मिनिट सोचकर शमीम ने कहा— "मैं कोशिश कर देखती हूं—

छुक-छुक-छुक-छुक-छुक,
रुक-रुक-रुक-रुक-रुक,
कभी तो पहुंच जाऊंगी,
कभी तो पहुंच जाऊंगी!"

शब्द फिर अपना अर्थ खो बैठे. लगा जैसे एक गरीब मालगाड़ी बोझ से लदी-फंदी, रोती-झींकती, दो-ढाई किलोमीटर की रफ्तार से सरक रही है. मैंने प्रकट नहीं होने दिया, किंतु मैं मान गई शमीम के आर्ट को. देहरादून पहुंचने तक शमीम सबकी चहेती बन चुकी थी. और तो और हमारी टीम की लड़कियां भी उसकी चमचागिरी के चक्कर में फंस गईं. शमीम के

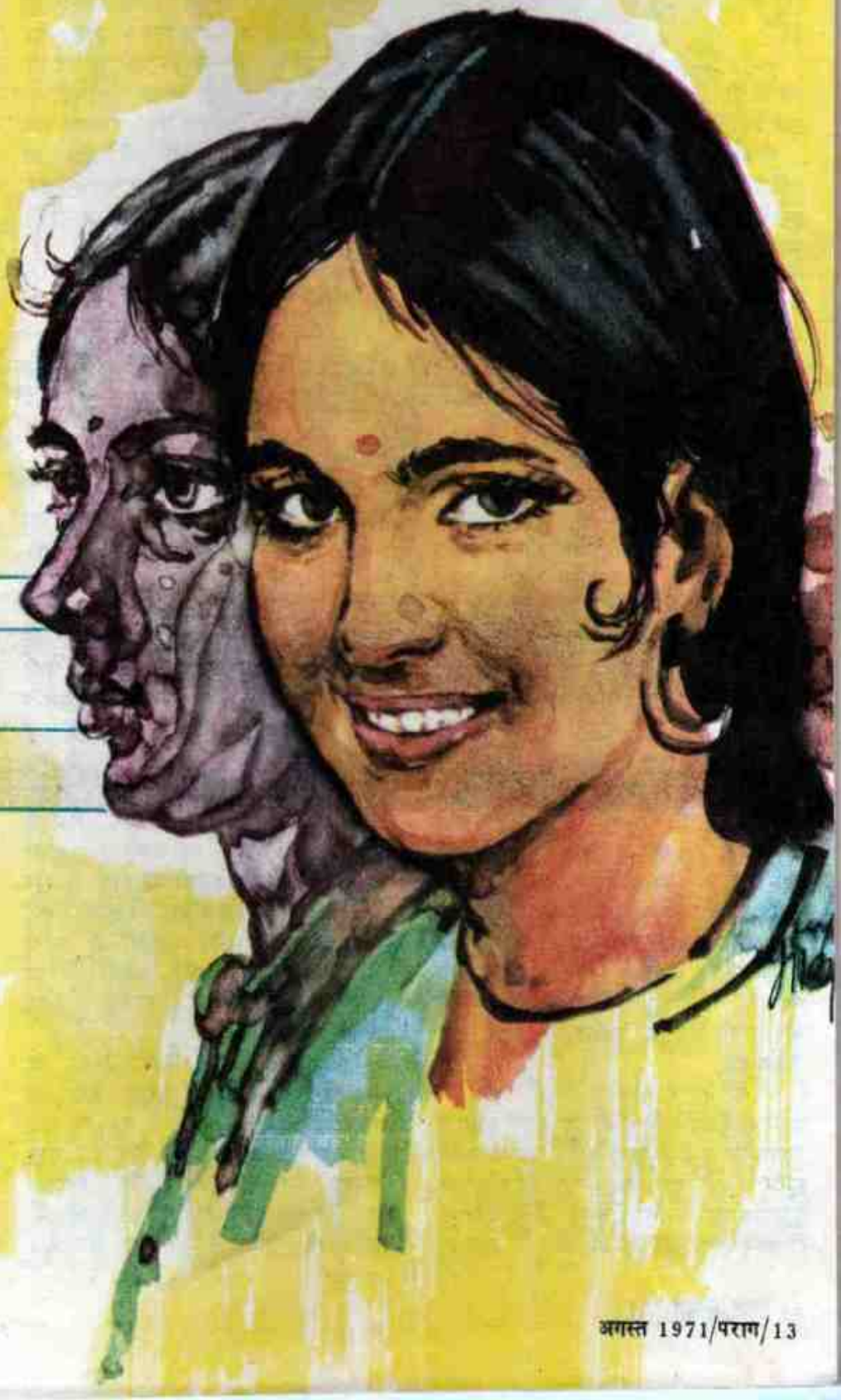

kissekahani.com

प्रति मेरे मन में ईर्ष्या का अंकुर तो कभी का पड़ चुका था. अब वह फूट निकला. वह 'सुषमा जी' कहकर बात करती तो लगता, जलाना चाहती है. किंतु कब तक? कल मैदान में 'सुषमा-सुषमा' हो जाएगा. मेरे कानों में वे शब्द गूंजने लगे, जिनको सुनने की मैं आदी हो चुकी थी—'बक अप, सुषमा . . . . बक अप फ्लाइंग रानी . . .' उत्तर में चलने वाली 'राजधानी एक्सप्रेस' से लेकर दक्षिण की 'डेकन क्वीन' तक जितनी भी फास्ट ट्रेनें भारत में दौड़ती हैं, सब मेरी पर्यायवाची थीं.

स्टेशन पर अवसर पाकर मैंने शमीम की टोह ली—"सौ मीटर में आपका टाइम क्या है?"

शमीम ने हंसकर उत्तर दिया—"यह तो हमारी पी. टी. टीचर ही बता सकती हैं, जो सारे रिकार्ड रखती हैं."

मैं जानती थी कि कोई एथलीट अपना टाइम नहीं बताती. पढ़ाई में भी ऐसा ही होता है. हमारे क्लास में फर्स्ट और सैकंड आने वाली लड़कियां गणित का पेपर देकर निकलती हैं, तो दोनों एक-दूसरे को गलत उत्तर बताती हैं. फिर दोनों रोती हैं—'हाय ! मैं तो इस बार फेल हो गई!' रिजल्ट आता है तो दोनों को सौ में से सौ नंबर!

शमीम मुझसे उड़ने की कोशिश करती है. मैं इसकी नस नस पहचानती हूं.

●

ट्रैक के दोनों तरफ भीड़ जमा थी. उत्तेजना का वातावरण था. बंदूक छूटी—धांय! आठों एथलीट दौड़ पड़ीं. बारह सैकंड मेरा टाइम था. ठीक बारह सैकंड बाद मैंने जाकर रस्सी छू ली. परिणाम सुनाया गया—सेंट थामस, अमृतसर की शमीम फर्स्ट; सेंट थामस, दिल्ली की सुषमा सैकंड.

मेरा कलेजा धक्-से रह गया. दौड़ते हुए इतना अवकाश कहां होता है कि दूसरे एथलीटों पर निगाह रखी जा सके. शमीम कब आगे निकल गई, मुझे पता न चला. यह तो हीट थी, इसमें फर्स्ट या सैकंड आने से अंतर नहीं पड़ता. तीन हीट होनी थीं और प्रत्येक हीट में से पहले दो एथलीट फाइनल राउंड के लिए चुने जाने थे. मैं फाइनल राउंड के लिए क्वालीफाई तो कर गई, किंतु इस बात से मुझे धक्का पहुंचा और हैरानी भी हुई कि शमीम मुझसे आगे निकल गई.

एक घंटे बाद दो सौ मीटर की हीट शुरू हुई. उसमें भी मैं इतना तेज दौड़ी कि अपनी समझ में उतना तेज कभी न दौड़ी हूंगी. इस बार मैंने शमीम का भी ध्यान रखा. पहले डेढ़ सौ मीटर में शमीम मुझसे बराबर पीछे रही, फिर एकाएक ही उसने अपनी गति बढ़ा दी और मेरे साथ आ गई. रस्सी के निकट हम बराबर ही पहुंची थीं, किंतु शमीम लंबी थी, उसने रस्सी को पहले छू दिया. हमारा टाइम समान था फिर भी शमीम फर्स्ट थी, मैं सैकंड.

बाद में मेरे ग्रुप की लड़कियों ने मुझे घेर लिया. कुछ ने पीठ ठोंकी किंतु एक ने कह ही दिया—"तुझे क्या हो गया, सुषमा?"

मैंने झेंप मिटाने के लिए कहा—"देहरादून ऊंचाई पर है. यहां की क्लाईमेट मुझे 'सूट' नहीं करती. मैं जल्दी हांफ जाती हूं. इस स्कूल का मैदान भी ठीक नहीं है. छोटे-छोटे कंकरों पर पैर फिसलते हैं."

होस्टल के कमरे में हम विश्राम के लिए आ गईं. वहां झेंप के मारे मेरा सिर न उठता था. पूरी टीम पर मेरी हार से निराशा छा गई थी. मेरे ही बल-बूते पर सेंट थामस, दिल्ली को एथलेटिक की ट्राफी मिलती थी. मेरा यह हाल है तो ट्राफी का क्या बनेगा? मैंने टीचर की सहानुभूति जीतने के लिए उनसे कहा—"मैडम, मेरे फ्लीट ठीक नहीं हैं, इनमें पसीना आता है; पैर चिपचिपाते हैं."

टीचर ने उदासीनता से कहा—"पैरों पर फुट-पाउडर डाला करो."

पैर चिपचिपाते थोड़े ही थे. मैं तो टीचर को यह बताना चाहती थी कि मैं क्यों पिछड़ गई. मैं फिर बोली—"मैंने गलत नंबर के फ्लीट 'इशू' करवा लिए, इनमें पैर कसा-कसा रहता है."

टीचर मेरे इस जबरन 'एक्सप्लेनेशन' थोपने से खीझ उठीं—"सुषमा, मैं तुम्हारा दौड़ने का टाइम अच्छी तरह जानती हूं. तुम इससे तेज कभी नहीं दौड़ीं. तुम्हारे दौड़ने में कोई दोष नहीं है. किंतु मुझे तुम्हारा व्यावहार समझ में नहीं आता. पिछले एक घंटे में तुम अपनी हार के पचास कारण सुना चुकी हो. इज इट स्पोर्ट्समैनशिप? स्पोर्ट्समैन जीत में फूलता नहीं और हार में रोता नहीं. मैं तुम्हें तुम्हारी पसंद के नए फ्लीट खरीद दूं, तो क्या तुम गारंटी दे सकती हो कि तुम फाइनल राउंड जीत लोगी? नहीं दे सकतीं. खेल में शामिल होने से पहले यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि खेल में हार भी होती है और जीत भी. किंतु हारने के बाद गर्द झाड़कर खड़े हो जाना चाहिए और प्रतिद्वंद्वी से कहना चाहिए कि एक बार और. समझी? निराश होने से काम नहीं चलेगा. फाइनल के लिए प्रैक्टिस करो."

काश, टीचर ने यह लैक्चर किसी बंद कमरे में अकेले में मुझे सुनाया होता, तो इसका एक-एक शब्द मेरे मन में घर कर गया होता. किंतु लड़कियों के बीच इस तरह डांटना तो मेरी साफ 'इंसल्ट' थी. लड़कियां टीचर का लैक्चर यूं मजे लेकर सुन रही थीं, मानो उनके श्रीमुख से मेरे लिए डांट नहीं, फूल झड़ रहे हों, किंतु टीचर के स्वर में कहीं पीड़ा झलक रही थी, जिसका एक ही कारण मैं सोच सकती थी—इस बार दिल्ली चार वर्षों से रखी एथलेटिक ट्राफी खो देगी.

मेरे दिमाग में खदबद-खदबद कर कुछ और ही खिचड़ी पकने लगी. टीम में मेरी एक अंतरंग सहेली थी—कैलाश. उसे हम चिढ़ाते थे कि तेरा नाम लड़कों जैसा है. उसी के आगे मैंने अकेले में अपने दिल की बात खोली—"तुम क्या सोचती हो कि इस बार हमारा स्कूल ट्राफी ले जाएगा?"

कैलाश ने चिंतित स्वर में उत्तर दिया—"कठिन दीखता है."

"तुम मुझे कमीनी न समझो, तो एक तरीका बताऊं?"

"यही न, हम भगवान से प्रार्थना करें कि शमीम रातोंरात बीमार पड़ जाए."

"मैं यह काम भगवान पर नहीं छोड़ना चाहती."

"मतलब?"

"स्कूल के पीछे जो सड़क जाती है उसके किनारे-किनारे कारपोरेशन ने बिजली के खंभे लगाने के लिए गढ़े खोद रखे हैं. तुम शाम को भोजन के पश्चात् शमीम को उधर घुमाने ले जाओ और अनजाने में ही तुम दोनों किसी गढ़े में गिर पड़ो."

"स्कीम तो ए-वन है, किंतु कोई ताड़ गया, तो स्कूल की इज्जत मिट्टी में मिल जाएगी."

"तुम साथ गिरोगी, तो किसे संदेह होगा?"

कैलाश ने हंसी में कहा—"मुझे चोट लग गई, तो हाई जंप का गोल्ड-मैडल कौन लेगा?"

"गोल्ड मैडल नहीं कुछ और मिलेगा तुम्हें? मुंह धो रखो! गोल्ड मैडल लेना हो तो अपने शरीर में से कम से कम बीस पौंड तुम्हें दिल्ली छोड़कर आने पड़ेंगे. तो स्कीम फाइनल है?"

"आई विल ट्राई माई बैस्ट!"

"ओह, यू गुड गर्ल! यह मेरी नहीं, स्कूल की प्रतिष्ठा का प्रश्न है," भावावेश में मैं कैलाश से लिपट गई.

●

सातवीं में थी जब मैं पहली बार एथलेटिक चैंपियन बनी और उसी वर्ष सेंट थामस दिल्ली ने जूनियर एथलेटिक ट्राफी जीती. आठवीं में मैं चैम्पियन रही. नवीं में जूनियर से सीनियर लीग में आई, तब सब कह रहे थे कि इस बार चैम्पियनशिप का कोई चांस नहीं है, किंतु पी.टी. टीचर ने मुझे ऐसी कड़ी ट्रेनिंग दी कि मैं ग्यारहवीं तक की लड़कियों को पछाड़ कर सीनियर चैम्पियन बन गई. टैंथ में चैम्पियन रहना ही था. अब स्कूल में अंतिम वर्ष था और चार वर्षों की सहेली चैम्पियनशिप छिन रही

kissekahani.com

थी. इस चैम्पियनशिप को बरकरार रखने के लिए मुझे हर कदम उचित जान पड़ता था.

मैस में खाना खाने के पश्चात् कैलाश ने शमीम के सामने टहलने का प्रस्ताव रखा. शमीम टाल गई—"न, बाबा, न, मुझे अंधेरे में होस्टल कंपाउंड से बाहर निकलते डर लगता है."

"अरे, वहां कोई भूत बैठा है जो तुम्हें निगल जाएगा!"

शमीम न मानी. अधिक जोर देकर साथ ले जाने से पोल खुल जाती. मेरा चेहरा फीका पड़ गया. कैलाश निराश लौट आई.

अवश्य ही नीले आसमान के ऊपर एक भगवान रहता है, जो लोगों की अच्छी-बुरी मनौती सुनता है और उन्हें थोड़ा-बहुत सेंसर करके मान लेता है. किंतु भगवान ने मेरी मनौती रत्ती भर भी सेंसर न की. थोड़ी देर बाद शमीम को उसके स्कूल की लड़कियां जबरदस्ती साथ घसीट ले गईं. शमीम और तीन अन्य लड़कियां एक साथ एक मीटर गहरे गड्ढे में गिरीं. चार में से दो एथलीट 'बेकार' हो गईं. शमीम के घुटने और पैर में बुरी तरह मोच आ गई. दोनों को कंधों पर लाद कर स्कूल के पास वाले अस्पताल में लाया गया.

इस समाचार से हमारी टीम पर मिश्रित प्रतिक्रिया हुई. अधिकांश लड़कियां भीतर से खुश थीं, ऊपर से दिखावे का अफसोस प्रकट कर रही थीं. हमारी टीचर को इस घटना से अलबत्ता आघात पहुँचा.

अगले दिन सुबह फाइनल राउंड था. शमीम को छोड़-कर हम पांच लड़कियां ट्रैक पर आ गईं. ट्रैक पर आने के पहले मैंने देखा कि भीड़ में सब से आगे शमीम खड़ी है. स्कर्ट के नीचे उसकी पूरी टांग पट्टी में लिपटी थी. अस्पताल से स्पेशल परमिशन लेकर वह रेस देखने आई थी. ट्रैक पर किसी को नहीं आने दिया जाता, किंतु शमीम ट्रैक लांघ कर मुझ तक आई, तो उसे किसी ने नहीं रोका. शमीम ने मेरे पास आकर धीमे से कहा—"बेस्ट आफ लक, सुषमा जी!"

उसकी शुभकामना से मेरे मन में जो चोर बैठा था, वह जैसे नश्तर चुभाने लगा. मुंह से 'थैंक्स' भी न निकला.

दौड़ शुरू हुई. मैंने जो शुरू से लीड ली, तो दूसरी लड़कियां पिछड़ती चली गईं. रस्सी कुछ ही मीटर दूर होगी, जब एक नन्हे कंकर पर मेरा पैर फिसला. मेरे कंठ से एक तेज चीख निकली. फिर मुझे कुछ होश न रहा.

अस्पताल में मैंने आंखें खोलीं, तो मेरी टीचर और दूसरी सहेलियां वहां मौजूद थीं. एकाएक ही मैं फूट-फूट कर रो पड़ी. टीचर ने धैर्य बंधाया, लड़कियां गुमसुम खड़ी रहीं. थोड़ी देर बाद नर्स ने आकर 'टाइम अप' कहा तो एक-एक करके सब चली गईं. कमरे में सिर्फ एक लड़की रह गई—शमीम. अपनी टांग के एक्स-रे का परिणाम आने से पहिले वह अस्पताल नहीं छोड़ सकती थी. वह अपना कमरा बदलकर मेरे कमरे में आ गई थी.

सबके जाने के पश्चात् शमीम ने कहा—"सुषमा जी, मैं तो तुक्के से जीती थी. तुक्का बार-बार नहीं चलता. आप अवश्य चैम्पियन बनतीं. चलो, स्कूल की चैम्पियनशिप में क्या रखा है. जिस कालेज में जाइएगा वहां की चैम्पियनशिप न छोड़ना."

मैं विस्मय से उस बोलती मूर्ति को देख रही थी, जो एथलेटिक चैम्पियन बनती न बनती, जिंदादिली की चैम्पियन अवश्य थी. उसे अपने पैर की मोच का गम न था, मेरी चोट का दुःख था. एकाएक ही मुझे भान हुआ कि मैदान की चैम्पियन बनने से तो जिंदादिली का चैम्पियन होना बेहतर है, जिंदादिली का चैम्पियन हरेक स्थिति में प्रसन्न रहता है. शमीम ने स्वयं चोट खाई थी, किंतु मुझे लगा कि वह मेरे कारण अस्पताल पहुंची है. मुझे अपने किए पर लज्जा आने लगी. सहसा मेरी आंखें भर आईं.

मेरी आंखें सजल देखकर शमीम परेशानी में पड़ गई कि वह कैसे मुझे सांत्वना दे. आखिर बोली—"सुषमा जी, यह आंसूबाजी नहीं चलेगी. हंस दीजिए, वरना मैं भी रो दूंगी. अच्छा आप ऐसे नहीं मानेंगी, तो मैं गाड़ी चलाती हूं—

छुक छुक, छुक छुक, छुक छुक,
धुक धुक, धुक धुक, धुक धुक,
रानी जी का कुत्ता सोए,
सुषमा रानी बैठी रोए,
ऊं हू, ऊं हू, ऊं हू, ऊं हू, कू ऊ ऊ ऊ. . . ."

फिर जो हम दोनों ने हंसना शुरू किया, तो पूरे अस्पताल की उदासी पोंछ डाली. ●

सी. बी. -7, गुरुद्वारा रोड,
हरिनगर, नई दिल्ली–18.

निवेदन—

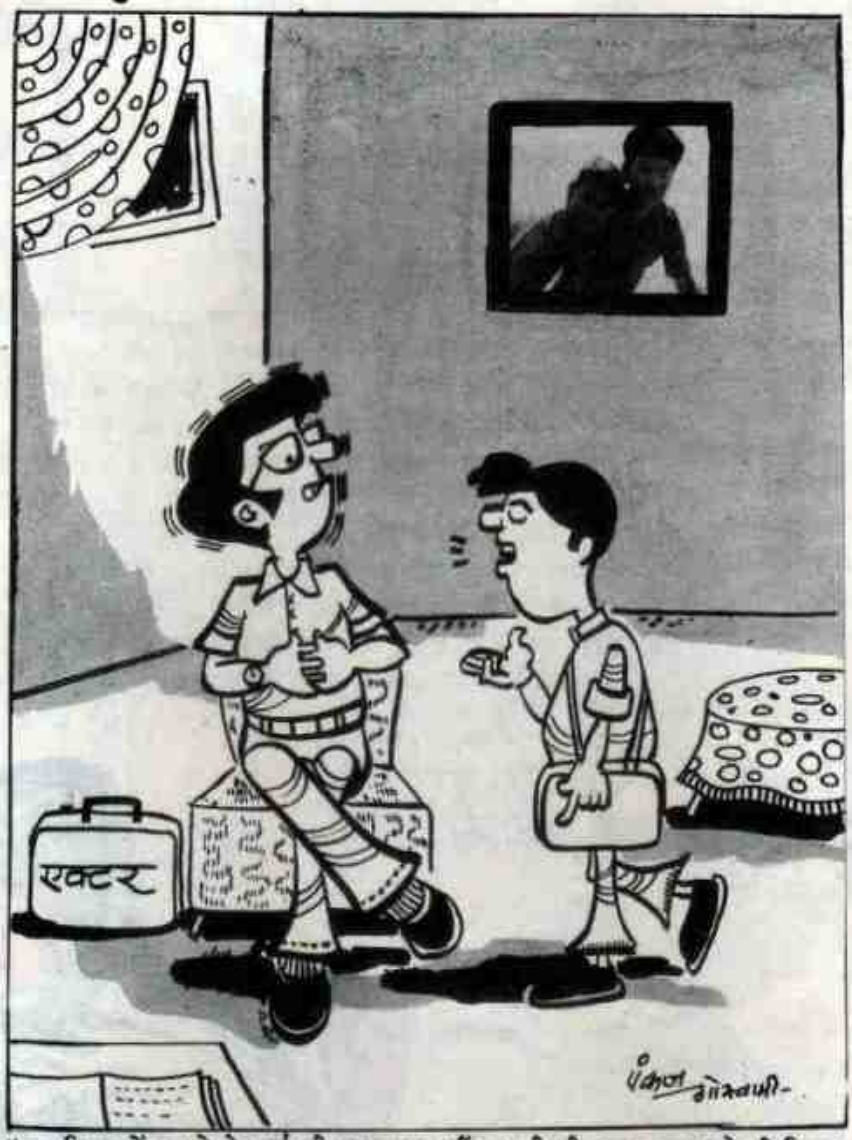

"एक फिल्म में आपने पेट-दर्द की जबरदस्त एक्टिंग की थी. कृपा वह मुझे भी सिखा दीजिए; क्लास से छुट्टी लेने के लिए ऐसे अभिनय की सख्त जरूरत पड़ती है!"

kissekahani.com

एक खिलंदड़ी कहानी

खिलाड़ी और

★शाहिद अब्बास अब्बासी

kissekahani.com

अपनी छोटी-सी जिंदगी में मैंने कितने ही मैच खेले हैं, मगर आज जितना उत्तेजित हूं उतना पहले कभी नहीं रहा.

आज मुझे हिसाब बराबर करना है. पिछले एक साल से मैं आज के दिन का इंतजार करता रहा हूं.

मेरी नई टीम का मेरी पुरानी टीम के साथ सालाना मैच है. और पुरानी टीम में वह शख्स भी खेल रहा है जिसकी वजह से मुझे वह टीम छोड़नी पड़ी थी. वह है अजय.

तब हम दोस्त हुआ करते थे. मैं टीम का सबसे अच्छा तेज गेंदबाज था और वह सबसे अच्छा बैट्समैन. मैं बॉलिंग की शुरूआत करता था और वह बैटिंग की. मगर बॉलिंग में वह कच्चा था और बैटिंग में मैं. यह और बात है कि शुरू से ही मेरे मन में अच्छी बॉलिंग के साथ-साथ अच्छी बैटिंग के लायक भी बनने का सपना पल रहा था.

पिछले साल का सालाना मैच था. हमारी टीम के छह खिलाड़ी बहुत ही कम रन संख्या पर आउट हो गए थे. मैं हमेशा की तरह आठवें नंबर पर आया, मगर जम गया.

मेरा साथी बल्लेबाज सावधानी से खेलता रहा और मैं शॉट पर शॉट लगाता गया. उस दिन जैसे मेरा हर कदम सही पड़ रहा था. जब भी बल्ला घुमाता, रन बनते.

तालियों के बेपनाह शोर के बीच मैंने अर्द्धशतक पूरा किया. मेरा साथी बल्लेबाज, हां वही अजय, शुरू से क्रीज पर था मगर सिर्फ सैंतीस रन बना पाया था.

कब लंच हुआ और कब मैं वापस मैदान में आया, मुझे पता ही न चला. मैं तो जैसे किसी

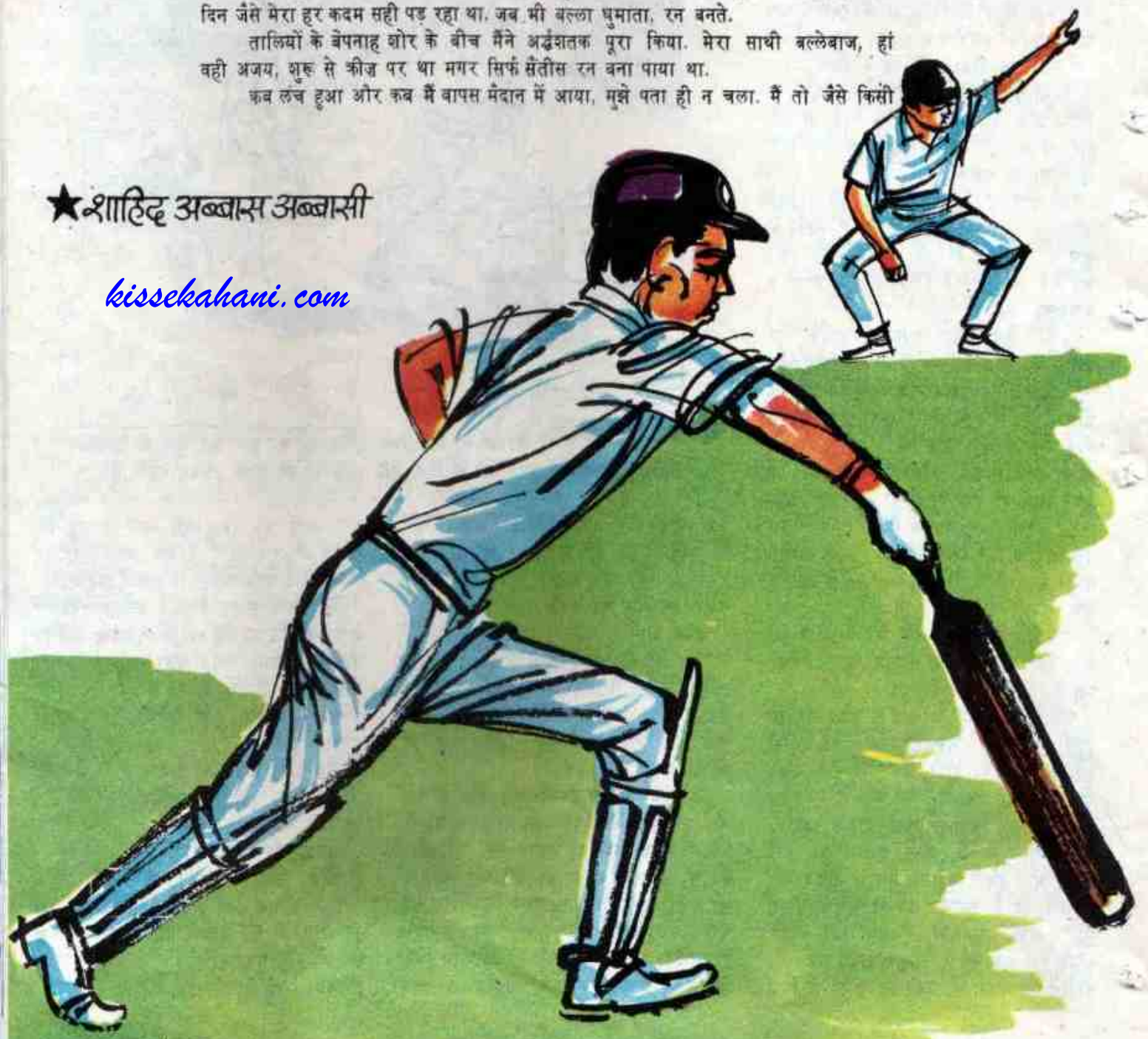

kissekahani.com

खिलाड़ी

मुझे ऐसा लगा जैसे मेरा सब कुछ लुट गया हो. मैं भौचक्का-सा थोड़ी देर पिच पर खड़ा रहा, फिर पेवैलियन की तरफ चल दिया. आंधी-सी उठ रही थी मेरे मन में.

बाकी का किस्सा बहुत थोड़ा-सा है. खेल खत्म होने पर अजय ने मुझसे क्षमा मांगी, कहना चाहा कि उसने जान-बूझकर गल्ती नहीं की थी.

मगर मुझे विश्वास नहीं आया. कैसे आता? साफ-साफ बात थी. अजय मेरी बल्लेबाजी को पनपते देखकर कुढ़ गया था. डर गया था कि कहीं उसकी प्रतिष्ठा फीकी न पड़ जाए. और ईर्ष्या की आग में उसने मेरी आकांक्षाओं का खून कर दिया था मुझे आउट करवाकर.

मैं जला-भुना तो था ही. झगड़ पड़ा. लोगों ने अजय का पक्ष

सपने में जी रहा था. अपने आप पर विश्वास नहीं आ रहा था मुझे.

मेरा स्कोर सत्तर के पार गया, फिर अस्सी के पार और फिर नब्बे के. एक 'कट' लगाकर मैं 92 पर पहुंचा. वहां से एक चौका लगाया—हो गए 96. चार रन और . . . और शतक पूरा. यही तो है एक बल्लेबाज की कसौटी, उसका प्रमाणपत्र!

मेरा दिल धक्-धक् कर रहा था और मैं अपने आप को संभाल रहा था, तभी ओवर पूरा हो गया. बॉलिंग का सामना अजय करने लगा.

अचानक उसने एक गेंद को धीरे से फटकारा और रन बनाने के लिए दौड़ पड़ा.

मैं भी दौड़ा मगर अजय अचानक ठिठका, 'लौटो' कहकर वापस अपनी क्रीज पर लपका. शायद उसे रन बनाने में खतरा नजर आया था.

मगर मैं तो मंझधार में था. मैं वापस पलटा. मगर तब तक एक क्षेत्ररक्षक गेंद उठाकर बॉलर को फेंक चुका था.

मैंने जबरदस्त छलांग लगाई कि किसी तरह क्रीज तक पहुंच सकूं.

मगर तब तक बॉलर ने गेंद स्टंपों पर दे मारी.

अम्पायर की उठी हुई उंगली का संकेत जैसे मेरी उम्मीदों के लिए प्राणदंड था!

आउट हो गया था मैं. 96 पर आउट! और वह भी अपनी नहीं, दूसरे की गल्ती से.

kissekahani.com

लिया. "जहन्नुम में जाओ," मैंने कहा. और टीम से अलग हो गया.

'गांधी क्लब' की टीम छोड़ कर मैं 'नायडू क्लब' की टीम में आ गया. दोनों शहर के प्रमुख किशोर-क्लब माने जाते हैं. हर साल दोनों टीमों में एक सालाना मैच होता है. शहर भर में इसकी चर्चा होती है. काफी बड़ी संख्या में दर्शक देखने आते हैं.

इस साल एक मैच की बजाय तीन मैचों की शृंखला रखी गई है. जो क्लब तीन में से दो मैच जीत लेगा वह चैम्पियन माना जाएगा.

आज पहले मैच का पहला दिन है.

हमारी टीम ने तास जीतकर 'गांधी क्लब' को बैटिंग के लिए बुलाया है. यह और भी अच्छा हुआ. मुझे ज्यादा इंतजार नहीं करना पड़ेगा.

बैटिंग के लिए अजीम के साथ अजय मैदान में आ रहा है. मेरे कप्तान ने नई गेंद मुझे दे दी है, बोलिंग शुरू करने को.

अपनी शक्ति बटोर रहा हूं मैं, कि क्या करना है.

अजय अपनी जगह पर आकर खड़ा हो जाता है. अम्पायर का इशारा. . . . मैं बोलिंग के लिए दौड़ पड़ता हूं.

एक-दो-तीन-तेरह कदम, बोलिंग क्रीज. . . . आखिरी क्षण में, गेंद छोड़ने से जरा पहले, मैं हाथ की तरह गेंद को लक्ष्य पर दे मारता हूं—यानी अजय के शरीर पर.

अजय संभल भी नहीं पाता कि गेंद टक की आवाज के साथ उसके जबड़े पर पड़ती है. पूरी ताकत से फेंकी गई गेंद!

अम्पायर के 'नो बाल' के इशारे पर ध्यान देने की किसे फुरसत है. अजय जबड़ा पकड़कर औंधा हो गया है. खिलाड़ी, दर्शक सब उसकी तरफ दौड़ पड़े हैं.

अजय को रिक्शे में लादकर अस्पताल ले जाया गया.

बाद में सुना उसके एक-दो दांत टूट गए. कई टांके भी लगे.

अपनी हरकत का फल उसे मिल गया था. मुझे संतोष हुआ. आइंदा कोई मेरे साथ बेईमानी नहीं करेगा.

●

आज आखिरी मैच शुरू होने वाला है. पिछले दोनों मैचों में अजय नहीं खेल पाया. अब उस की हालत ठीक है, वह खेलेगा.

पहला मैच 'नायडू क्लब' और दूसरा मैच 'गांधी क्लब' जीत चुके हैं. यह निर्णायक मैच है. इतवार होने की वजह से जैसे सारा शहर उमड़ पड़ा है. चारों तरफ दर्शक ही दर्शक हैं.

हमारी टीम ने तास जीतकर बैटिंग ली है. रोमांचकारी मैच शुरू हो गया है.

तीन रन बने हैं. अचानक हमारे जान का आफ स्टम्प कलाबाजी खाता हुआ नजर आता है.

तीन रन और बनते हैं कि दूसरा खिलाड़ी भी आउट. स्कोर सत्रह होते होते हमारा कप्तान विश्वास भी मार खा जाता है. 'गांधी क्लब' का नया तेज गेंदबाज अकरम कयामत ढा रहा है.

वापस आते ही विश्वास मुझसे कहता है, "जल्दी से पैड बांध लो, अगला विकेट गिरने पर तुम्हें जाना है. किसी तरह अकरम के पैर उखाड़ो. उसकी गेंदों पर एक-दो छक्के लगा दिए तो 'गांधी' का कप्तान उसे बोलिंग से हटा देगा. फिर चाहे तुम आउट हो जाओ, हमारे बचे हुए अच्छे बैट्समैन स्थिति संभाल लेंगे."

मैं आठवें नंबर पर जाने के लिए इत्मीनान से बैठा था. विश्वास के कहने पर जल्दी-जल्दी तैयार होने लगा.

दस्ताने पहनते हुए मुझे शोर सुनाई दिया. देखा तो तारापोर वापस आ रहा था. उसे भी अकरम ने ही बोल्ड किया था.

जल्दी से बल्ला संभालकर मैं चल दिया.

अकरम की गेंद बड़ी ही तेज थी. मैंने रोकने की कोशिश की, मगर बल्ले के छोर से टकराकर गेंद उछली और 'स्लिप' फील्डर के पास गई. उसने कैच करना चाहा, मगर गेंद उसकी उंगलियों को छूती हुई तेजी से बाउंड्री पार कर गई.

बाल-बाल बचा !

अगली गेंद पर मैं हिम्मत बटोर कर आगे बढ़ा और बल्ला घुमा दिया. गेंद बोलर और फील्डर के सिर पर से होती हुई चली. . . दर्शकों की भीड़ में.

छक्का !

बेपनाह तालियां. 'शाबाश, अनवर, शाबाश' की आवाजें. मुझ पर खून सवार हो गया था. अकरम की अगली दोनों गेंदों पर भी मैंने जबरदस्त शाट लगाए. एक पर छक्का पड़ा, एक पर चव्वा.

अकरम के अगले ओवर में मैंने तीन चौके और लगाए. और वही हुआ जो हम चाहते थे. अकरम को गेंदबाजी से हटा दिया गया.

मेरे साथी बल्लेबाज का आत्मविश्वास लौटा. वह जमकर खेलने लगा. देखते ही देखते हमारा स्कोर सौ की संख्या पार कर गया.

मैं शाट पर शाट लगाए जा रहा था. लंच के जरा पहले जब मेरा स्कोर पचास को पार गया, तो जैसे मुझे होश आया. मैं सम्हल कर खेलने लगा.

लंच के बाद बैट्समैन फिर आउट होने लगे, मगर मैं जमा रहा. मैं देख रहा था कि अजय 'शार्ट लैग' पर (विकेट कीपर के बाईं तरफ, बल्लेबाज से थोड़ी ही दूर) फील्डिंग कर रहा था और बराबर इस फिराक में था कि मुझसे चूक हो और वह कैच पकड़ ले.

. . . और लंच के एक घंटा बाद मैंने फिर अपने आपको उस डगमगाने वाले स्कोर पर पाया—नव्वे पर.

न जाने कहां से मेरे मन में आउट होने का भय समा गया था. मैं बहुत सम्हल कर खेलने लगा. एक-एक दो-दो करके मैंने नौ रन और निकाले.

अब मैं निन्यानवे पर था. मामूली और गैर-मामूली स्कोर के बीच का सबसे छोटा फासला सिर्फ एक रन का !

'गांधी क्लब' का तरडे इस वक्त गेंद डाल रहा था. उसकी अगली गेंद को मैंने पीछे हटकर रोकना चाहा, मगर टिप्पा खाकर गेंद मुड़ी और बल्ले के छोर से लगकर उछलती हुई अजय की तरफ गई.

अजय की तरफ मेरी पीठ थी.

एक क्षण का हिला देने वाला मौन, फिर विकेट कीपर और दूसरे क्षेत्र रक्षकों की जोरदार अपील.

गर्दन मोड़कर मैंने अजय को गेंद थामे देखा और फिर सामने वाले अम्पायर की उठती हुई उंगली को.

'नहीं,' मैंने चीखना चाहा, 'गिरा दो ये हाथ, समेट लो अंगुली को. एक रन बन जाने दो, फिर सब कुछ करना!'

मगर मैं कुछ नहीं कह सका. दिल धक् से रह गया. सिर से लेकर पैर तक एक लहर दौड़ गई. वही हो गया था जिसका डर था. अपने आपको विश्वास दिलाते हुए कि आउट हो गया हूं, मैं लौट चला.

'ठहरो' तभी आवाज आई. अजय रुकने का इशारा करके अम्पायर की तरफ जा रहा था.

बेपनाह शोर था. कुछ न समझ पाकर दर्शक बावले हुए जा रहे थे.

फिर मैंने सामने वाले अम्पायर को लैग अम्पायर के पास जाकर सलाह लेते हुए देखा. अंत में वह मेरे पास आया.

"तुम आउट नहीं हुए हो, खेलो," उसने कहा.

"क्या?" मेरा मुंह खुला का खुला रह गया था.

"आई एम सॉरी," वह बोला, "दरअसल जब गेंद मिस्टर अजय के हाथ में गई तब आपके बीच में होने की वजह से मैं उन्हें देख नहीं पाया. उधर 'लैग अम्पायर' की ओर अजय की पीठ थी."

"तो मैं कैच आउट नहीं हुआ?"

"नहीं. मिस्टर अजय ने बताया कि गेंद उनके हाथ में पहुंचने से जरा पहले टिप्पा खा गई थी."

सोचने-समझने की मानो शक्ति गायब हो गई थी. मैं वापस क्रीज पर पहुंचा.

(शेष पृष्ठ 55 पर)

kissekahani.com

'पराग' किशोर कथा-प्रतियोगिता नं. २

• प्रथम पुरस्कार १००० रु • द्वितीय पुरस्कार ५०० रु

• तृतीय पुरस्कार ३०० रु

१००-१०० रुपये के दो पुरस्कार दो अन्य विशिष्ट कथाओं पर

इस अंक से 'पराग' अपना क्षेत्र विस्तृत कर रहा है. वह प्रमुख रूप से किशोर पाठक-वर्ग को अपने पाठकों में सम्मिलित कर रहा है. यह वह आयु-वर्ग है, जो एक ओर बचपन को तिलांजलि दे रहा होता है, तो दूसरी ओर अपने आपको वयस्कों में शुमार करने लगता है. माता-पिता और संरक्षकों के अनजाने ही, वह उन बंधनों को बलात् या चुपचाप तोड़ देना चाहता है, जो बच्चों की सुरक्षा की दृष्टि से उन पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से लगे रहते हैं. उसके स्वप्न सुनहरे होते हैं, यथार्थ उसके सामने धूमिल होता है, वह उत्तरदायित्वों का मखौल उड़ाना चाहता है. और उनमें कसता जाता है, और वह जीवन के गुलाबों के पीछे पीछे छिपे कांटों से छिदकर भी उन्हें तोड़ लेना चाहता है. वह उतावला होता है, उत्साही होता है, अधीर होता है, साहसी होता है, और उद्वेलित होता है. यह वह वर्ग है, जो बड़ों की दृष्टि में अविचार, नासमझी, दुस्साहस, विरोध और विद्रोह का पुंज होता है—किंतु वास्तव में वह मात्र दिशाहीन शक्ति का अपार भंडार होता है.

हमें भारतीय किशोर-किशोरियों की आत्मा के अनुरूप ऐसी मौलिक कथाओं की दरकार है, जिनके पात्र अपने समस्याग्रस्त परिवार, दूषित वातावरण, खंडित व जीर्णशीर्ण परंपराओं से जूझते हुए, अपनी समस्त दुर्बलताओं के अंधेरे में हाथ-पैर मारते हुए, अपने लिए एक नए जीवन का अनुशीलन करने के लिए कृत-संकल्प हों. वे पात्र कदाचार से ग्रस्त भारतीय शिक्षा-व्यवस्था, परीक्षा-प्रणाली, राजनीतिक अनाचार, गुरु-शिष्य संबंध, स्वीकृत यौनाचार, सामाजिक अर्थाचार, सभी को संदेह की दृष्टि से देखते हैं, और अपनी सद्यप्राप्त शक्ति के बल पर उनसे भिड़ जाने के लिए अधीर हो उठते हैं. इन कथाओं में अत्यावश्यक मनोरंजन तो हो ही, किशोरों के मनोवैज्ञानिक यथार्थ और उन सभी तत्वों के संघर्ष का दिग्दर्शन हो, जिन्होंने आज के किशोर-मस्तिष्क को आक्रांत कर रखा है.

आवश्यक नियम

1—कहानी सामान्यतः 4,000 से 6,000 शब्दों के बीच होनी चाहिए.

2—वह अनिवार्यतः अप्रकाशित, अप्रसारित तथा मौलिक होनी चाहिए. अनूदित, रूपांतरित या अन्य भाषाओं की कहानियों के आधार पर लिखित कहानियों पर विचार नहीं किया जाएगा.

3—लिफ़ाफ़े तथा पांडुलिपि के ऊपर, बायें कोने पर 'पराग किशोर कथा-प्रतियोगिता नं. 2' लिखा होना चाहिए.

4—एक लेखक या लेखिका दो से अधिक कहानियां प्रतियोगिता के लिए न भेजें.

5—प्रत्येक पांडुलिपि के ऊपर एक कोरा काग़ज़ अलग से लगा होना चाहिए, जिस पर लेखक-लेखिका का पूरा पता, कहानी का शीर्षक, भेजने की तिथि, आवश्यक विवरण दर्ज हों. पांडुलिपि के अंत में भी लेखक-लेखिका का पूरा पता दर्ज होना चाहिए.

6—अस्वीकृत पांडुलिपियों को उसी अवस्था में वापस किया जाएगा जबकि उनके साथ लेखक-लेखिका का पता लिखा व पूरे टिकट लगा लिफ़ाफ़ा लगा होगा.

7—पांडुलिपि फुलस्केप काग़ज़ों की एक ओर, एक चौथाई हाशिया छोड़कर, स्पष्ट, सुपाठ्य व स्वच्छ अक्षरों में लिखी होनी चाहिए—या नए रिबन से टाइप की हुई मूल प्रति होनी चाहिए.

8—पांडुलिपियां 15 अगस्त 1971 के बाद संपादक, 'पराग' (किशोर-कथा प्रतियोगिता नं. 2), 10, दरियागंज, दिल्ली-6 के पते पर भेजी जानी चाहिएं.

9—पांडुलिपियां हमें अधिक से अधिक 15 अक्तूबर 1971 तक मिल जानी चाहिएं.

10—प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा अन्य दो विशिष्ट पुरस्कार योग्य कहानियों को 'पराग' का संपादक मंडल चुनेगा, तथा उसकी घोषणा मार्च 1972 के अंक में कर दी जाएगी.

11—इस प्रतियोगिता के संबंध में, किसी भी स्तर पर, पराग-संपादक का निर्णय सर्वमान्य होगा।

kissekahani.com

kissekahani.com

kissekahani.com

kissekahani.com

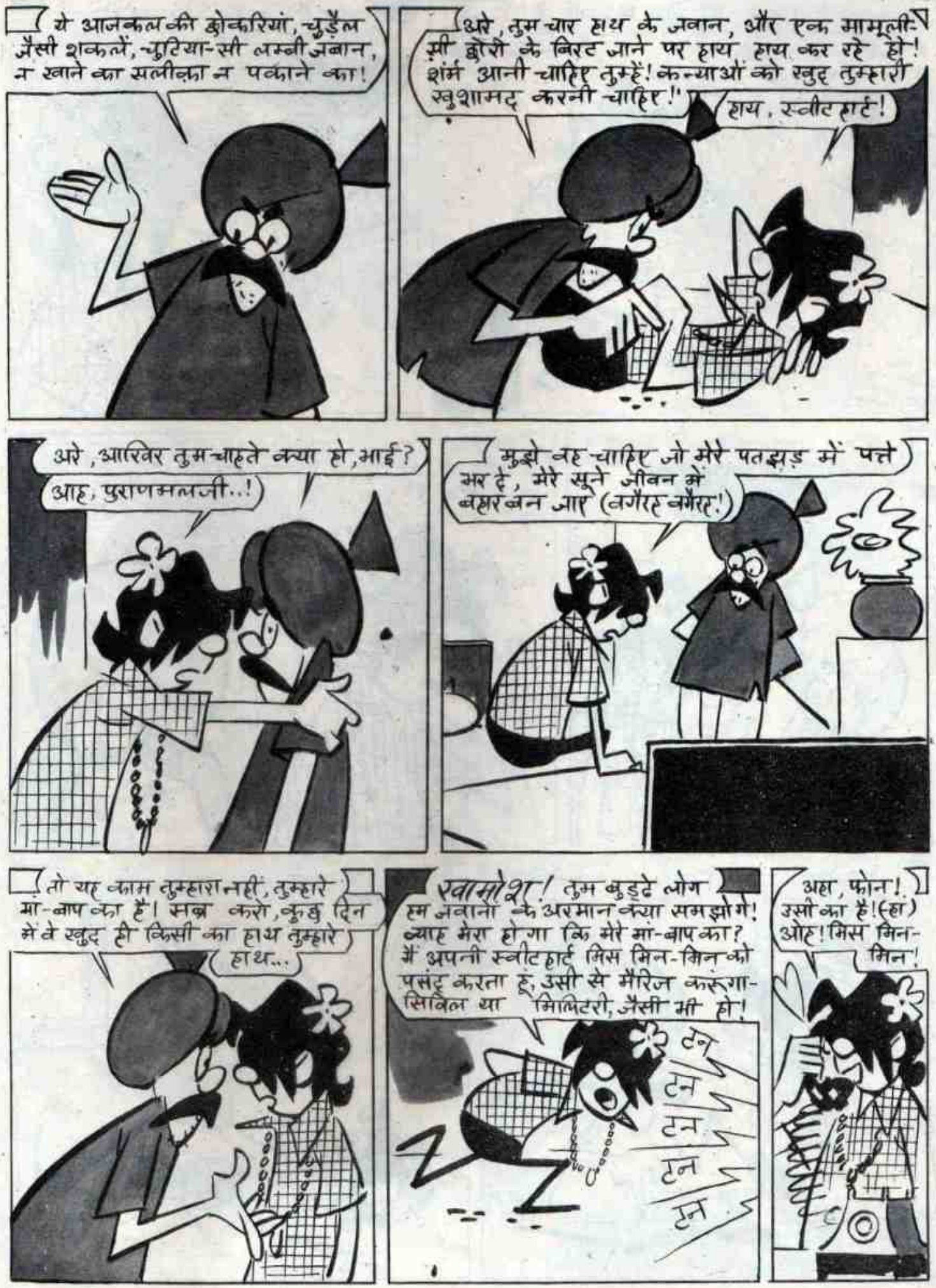

kissekahani.com

kissekahani.com

यह परिचर्चा क्यों?

यह प्रश्न उतना नया नहीं है, जितना दिखाई देता है. छुटपुट—और किसी कदर पुराणपंथी—विचार इस बारे में यत्र-तत्र प्रकट किए जाते रहे हैं कि अपराध साहित्य पढ़कर 'बच्चों' के दिमाग़ बिगड़ते हैं, और वे स्वयं अपराध की ओर उन्मुख होते हैं. हमें इस पर 'बच्चों' के दृष्टिकोण से नहीं, बड़ों के दृष्टिकोण से भी नहीं, मात्र किशोर-किशोरियों के दृष्टिकोण से विचार करना है. इस दृष्टि से निम्न प्रश्न उठते हैं—

1. क्या स्वयं जासूसी साहित्य की विधा को ही गर्हित मान लिया जाए?—या व्यक्ति के चरित्र व बौद्धिक निर्माण में उसकी कोई विशिष्ट उपादेयता है?—क्या अपराध साहित्य का पठन-पाठन हम किशोरों की दृष्टि से एक 'आवश्यक बुराई' के रूप में स्वीकार करें और इसे एक 'बुरी लत' समझा जाए?
2. क्या हम किशोरों के सामने एक 'वर्जित फल' लटका कर उसे चखने से मना करने का बाइबिली ढंग अपनाएं?—या उन्हें उस की अच्छाई-बुराई समझाते हुए, एक ओर उस वर्जित फल को सही तौर से उगाने की कोशिश करें, तो दूसरी ओर उसकी दिग्भ्रमित करने वाली प्रवृत्ति की ओर से किशोरों को सचेत करें.
3. क्या अत्यधिक रोमांस, विकृत रोमांस, अनुचित वासना का आरोप केवल जासूसी उपन्यासों पर ही लादा जा सकता है, या भारतीय भाषाओं का तथाकथित 'उच्च साहित्यिक कथाकार' इन प्रवृत्तियों की ओर जासूसी उपन्यास-लेखकों से भी अधिक उन्मुख है? या इस प्रकार का 'उच्च-स्तरीय' साहित्य भी किशोरों के लिए वर्जित करार दिया जाए?
4. इस अवस्था में क्या किशोरों के लिए अलग तरह के जासूसी उपन्यास रचने-रचाने की ओर भी ध्यान दिया जाए?—यदि हां, तो क्या हिंदी में—और अन्य भारतीय भाषाओं में भी—इस प्रकार की उपन्यास-रचना की ओर ध्यान दिया जा रहा है?—व्यक्तिगत लेखन-कौशल के अतिरिक्त इस प्रकार की श्रेष्ठ साहित्य-रचना में क्या-क्या कठिनाइयां हैं?

इस परिचर्चा का आरंभ प्रसिद्ध कथाकार श्री मनहर चौहान की युवा लेखनी से किया जा रहा है. यह आवश्यक नहीं है कि हमारे विचार भी उनसे मेल खाते हों.

—संपादक

'वर्जित फल' (स्थायी स्तंभ)

क्या 'पराग' के लिए प्रस्तावित एक परिचर्चा

किशोर-किशोरियों को जासूसी उपन्यास पढ़ने दिए जाएं या नहीं? नाज़ुक सवाल है. ताज्जुब कि इससे पहले इसे किसी ने उठाया ही नहीं.

दरअसल, यह कुछ-कुछ उसी तरह का सवाल है कि कोई पूछे, 'किशोर वय के बच्चों को सिगरेट पीने दी जाए या नहीं?' घर में कोई नहीं चाह रहा होता कि बच्चे सिगरेट पीना शुरू करें, किंतु अनेक बच्चे सिगरेट शुरू करते ही हैं. और इसी तरह बुज़ुर्ग नाराज़ हो जाते हैं, जब वे अपने किशोर-किशोरियों को जासूसी उपन्यासों की लत पड़ते देखते हैं. किशोर-किशोरियां, किंतु, जासूसी उपन्यास पढ़कर रहते हैं.

सवाल, इसलिए यह नहीं है कि उन्हें जासूसी उपन्यास दिए जाएं या नहीं—न देंगे बुज़ुर्ग, तो क्या वे कहीं-न-कहीं से प्राप्त न कर लेंगे? वे सिगरेट प्राप्त कर सकते हैं और जासूसी उपन्यास भी—और उन्हें बुज़ुर्गों के उपदेशों की खास परवाह नहीं हुआ करती.

सवाल, इसलिए, यह है कि किशोर-किशोरियों को आख़िर किस प्रकार के जासूसी उपन्यास दिए जाएं—या, अगर वे स्वयं प्राप्त कर लें, तो एतराज़ न उठाया जाए.

इसके उत्तर में सबसे पहले उस मनोवैज्ञानिक कारण की छानबीन करनी होगी कि किशोर वय प्राप्त करते-करते क्यों अधिकांश बच्चे जासूसी उपन्यासों के दीवाने हो जाते हैं.

नहीं भूलना चाहिए कि आज के किशोर-किशोरियां आधे व्यस्क होते हैं. अपनी वयस्कता के अधूरेपन को वे पहचानते भी हैं और उनमें यह अदम्य लालसा उबल रही होती है कि जितनी शीघ्रता से हो सके, उतनी शीघ्रता से वे अपने अधूरेपन को लांघकर पूर्ण, पराक्रमी वयस्क बन जाएं—जैसे कि मम्मी या डैडी उन्हें नज़र आते हैं.

पराक्रमी वयस्क बनने की उतावली में वे उन सभी प्रतीकों को जल्दी-जल्दी अपना लेना चाहते हैं, जो वयस्कता के—पूर्ण वयस्कता के साथ सीधे-सीधे जुड़े हुए हैं. छिपकर—या सरेआम—सिगरेट पीकर किशोर वय के बच्चे ऐलान-सा करते हैं कि देखो, हम भी वयस्क हैं, वयस्कों की तरह हम भी सिगरेट पी सकते हैं, पी रहे हैं.

यही बात जासूसी उपन्यासों के लिए भी है. जासूसों के रोमांचक पराक्रम पढ़कर किशोर-किशोरियां स्वयं को भी जासूस महसूस करने लगते हैं. जासूस के कारनामे उन्हें स्वयं अपने कारनामे लगते हैं. जासूसी के ब्यौरों और सिगरेट के धुएं में उनके लिए फिर कोई अंतर नहीं रह जाता. वे अपने प्रिय जासूस जैसे ही चंट-चालाक, स्फूर्तिवान, साहसी और आकर्षक बन जाना चाहते हैं. जासूसी उपन्यास उनके लिए उस शीशे की तरह होता है कि जिसमें खुद अपनी सूरत हू-ब-हू नज़र आए. इसी लिए, जासूसी उपन्यास किशोरों की एक 'सांस्कृतिक आवश्यकता' बन जाते हैं.

सोचना अब यह है कि हिन्दी के जासूसी उपन्यास इस 'सांस्कृतिक आवश्यकता' को पूरा करते हैं या नहीं.

और तब जो स्थिति सामने आती है, वह भयानक है.

सच पूछो तो हिंदी में जासूसी उपन्यासों का लेखन अभी शुरू ही नहीं हुआ. जो-कुछ भी हिंदी में है, सब प्रायः विदेशी उपन्यासों की सीधी नक़ल के रूप में. जासूसी उपन्यासों के हमारे अधिकतर लेखक समाज के प्रति कोई दायित्व अनुभव नहीं करते. उनका सिर्फ़ एक काम है कि रात को कोई विदेशी जासूसी उपन्यास पढ़ा और सुबह उसके आधार पर हिंदी का उपन्यास शुरू करके, आठ-दस दिनों में

kissekahani.com

जासूसी उपन्यास किशोर-पाठकों के चरित्र-निर्माण में बाधक हैं?

kissekahani.com

पूरा कर, प्रकाशक से हज़ार-पांच सौ की रक़म वसूल की. ऊटपटांग कथानक, जिनका बुद्धि या वैज्ञानिकता से कोई संबंध नहीं, और जिनका जासूस, जासूसी की बनिस्बत सुंदर लड़कियों के पीछे लार टपकाने में ही ज्यादा रस लेता है; बाज़ार में ये लेखक थोक के भाव फेंकते चले जाते हैं और अपनी जेब गर्म करते हैं. ये नहीं जानते—या जानकर भी अनजान बनते हैं—कि किशोर-किशोरियों को ऐसे घटिया कथानकों के जाल में फंसाकर ये समाज का कितना अहित करते हैं.

किशोर-किशोरियां अपनी अधूरी वयस्कता की केंचुल उतारकर पूर्ण वयस्क के रूप में जगमगाने के लिए इस सीमा तक लालायित होते हैं कि अपनी स्थिति वे मोम के पुतलों जैसी बना डालते हैं. जो भी चीज सम्पर्क में आई, वह उस मोम पर गहरी छाप डालती निकल जाती है. बड़ी खतरनाक होती है किशोर वय—कि जब लड़के, अपने प्रिय जासूस की देखादेखी, सुंदर लड़कियों के पीछे सीटी बजाते घूमना चाहते हैं और लड़कियां भी, अपने प्रिय जासूस की चहेतियों की देखादेखी, कामना करने लगती हैं कि लड़के उनके इर्दगिर्द मंडराते रहें—वरना उनकी सुंदरता की क़ीमत ही क्या हुई! किशोरों के बीच उद्दंडता और किशोरियों के बीच बेशर्मी (फैशन के नाम पर) की गति आज जिस तेज़ी से बढ़ रही है, उसका दोष घटिया जासूसी फिल्मों और उपन्यासों के ही मत्थे सबसे अधिक है.

विदेशों में किशोर-किशोरियों के लिए जासूसी उपन्यास विशेष रूप से लिखे जाते हैं. किशोर-किशोरियों की इस 'सांस्कृतिक आवश्यकता' को पूरा करने का दायित्व पश्चिमी लेखक-लेखिकाओं ने खूब संभाला है. उन उपन्यासों में स्वयं किशोर ही अधिकांश जासूसी करते हैं—कुछ ऐसी सूझबूझ के साथ कि जब उनकी कहानियां किशोर-किशोरियां पढ़ते हैं, तो वह सारी सूझबूझ स्वयं उनके भीतर भी विकसित होती चलती है.

हिंदी में—बल्कि अधिकांश भारतीय भाषाओं में—अच्छे जासूसी उपन्यास न तो मौलिक रूप में उपलब्ध हैं और न अनुवादों के रूप में. जिन विदेशी उपन्यासों को भारत में तोड़-मरोड़ कर पेश किया जाता है, वे मूल अंग्रेजी में भी घटिया होते हैं और हिंदी में आकर तो और भी घटिया हो जाते हैं. वे अपने पाठक की सूझबूझ को पनी करने की बजाए उस पर परदा डालने का ही काम करते हैं.

विदेशों में जासूसी उपन्यासों की तीन स्पष्ट श्रेणियां बन चुकी हैं —

1. घटिया, रोमानी और सेक्सी जासूसी उपन्यास, जिनका वास्तविक जासूसी से दूर का भी नाता नहीं.

2. वास्तविक जासूसी की बारीकियां समझाने वाले वैज्ञानिकता, देशभक्ति और साहसिकता से भरपूर उपन्यास, जो अपने नायक को केवल एक मनचले के रूप में नहीं, बल्कि सच्चे जवांमर्द के रूप में पेश करते हैं.

3. किशोर-किशोरियों के लिए नन्हे-नन्हे, सचित्र, जासूसी उपन्यास. जिनके कथानकों की उलझनें स्वयं बच्चे या उनके मां-बाप, भाई-बहन, शिक्षक आदि सुलझाते हैं और साहस, सूझबूझ व धैर्य की क़ीमत उजागर करते हैं. कुत्ता, बिल्ली, हाथी, तोता वग़ैरा जो पशु-पक्षी बच्चों को प्रिय हैं, वे भी इन उपन्यासों में अक्सर शानदार रोल अदा करते हैं.

हिंदी में केवल उसी श्रेणी के जासूसी उपन्यास उपलब्ध हैं, जिन्हें हमने नंबर एक दिया है. बच्चे या बूढ़े—जिन्हें भी जासूसी उपन्यास पढ़ना है, उनके पास सिवा इस के और कोई चारा नहीं कि वे घटिया, रोमानी और सेक्सी जासूसी उपन्यास ही पढ़ें. जब कोई अच्छा उपन्यास पढ़ने का अवसर उन्होंने पाया ही नहीं, फिर वे अच्छे उपन्यास को पहचानें कैसे? इसी लिए वे जासूसी उपन्यासों के संसार में अच्छे या बुरे का अंतर स्वीकार ही नहीं करते. 'ये सब एक-से होते हैं' यही सोचते हैं वे, और टाल जाते हैं.

टाल कौन जाते हैं?

टालते वे हैं, जो समझदार बुज़ुर्ग हैं; जो केवल 'यूं ही मनबहलाव' के लिए जासूसी उपन्यास भी पढ़ लेते हैं और फेंक कर भूल जाते हैं; जो जानते होते हैं कि जासूसी के नाम पर जो लिखा गया है, सब बकवास, गंदा और झूठा है.

किंतु—

टालते वे नहीं हैं, जो कच्ची उम्र के हैं; जो अभी ठीक से जवान नहीं हुए; कि जो किशोर-किशोरियां हैं. जासूसी उपन्यासों को वे केवल 'यूं ही मनबहलाव' के लिए नहीं पढ़ते. ऐसी चीज़ें वे सचमुच इस लिए पढ़ते हैं कि मारधाड़ और भागम्भाग के वर्णनों में वे उस वयस्क दुनिया की झांकी पाते हैं—या पाने के भ्रम में रहते हैं—जिस वयस्क दुनिया में अभी उनका आधा ही प्रवेश हुआ रहता है और जहां सम्पूर्ण प्रवेश पा लेने के लिए वे दिन-रात तड़प रहे होते हैं. इसी लिए अधिकांश जासूसी उपन्यासों को अधिकांश किशोर-किशोरियां सच्चे और प्रेरणादायक समझते हैं—अनजाने में.

लेकिन यदि—वाक़ई सच्चे और प्रेरणादायक जासूसी उपन्यास उनके लिए विशेष रूप से लिखे जाएं, तो कोई कारण नहीं कि उनकी दुनिया में वे लोकप्रिय न हों.

किंतु हिंदी के लेखक (?) केवल घटिया, रोमानी, झूठे और सेक्स-सने कथानकों में ही रमे हुए हैं. सबसे पहले तो वे अच्छे जासूसी

kissekahani.com

पिंकी, बबलू, चुन्नू, मुन्नू सब पढ़ते हैं

चंपक

और तुम?

नया अंक पढ़ कर तो देखो! चंपक की चटपटी कहानियां, नईनई बातें सिखाने वाले लेख, मन लुभा लेने वाली पहेलियां, सूझबूझवाले बहुत से स्तंभ और छका देने वाले चीकू के कारनामे तुम्हें भी इतने पसंद आएंगे कि तुम चंपक का हर अंक खरीदे बिना न रह सकोगे!

बच्चों को देवों, दानवों, राक्षसों, जादूटोनों व छलकपट की कहानियों के जहर से बचा कर देशभक्त, साहसी व चरित्रवान बनाने वाली पत्रिका

नमूने की प्रति मुफ्त मंगाने के लिए डाक खर्च के लिए 15 पैसे के डाकटिकट रख कर यह कूपन पोस्ट कर दो :

दिल्ली प्रेस, नई दिल्ली-५५ :

चंपक की नमूने की प्रति इस पते पर भेज दीजिए :

नाम : .....

पता : .....

kissekahani.com

उपन्यास लिखना शुरू करें—बड़ों के लिए, कि जिन्हें हमने नंबर दो पर रखा है. उसके बाद, या उसके साथ-साथ ही, वे तीसरे नंबर की चीजें लिखें—खास बच्चों के लिए नन्हे-नन्हे साहसिक, जासूसी कथानक वे (और प्रकाशक) चित्रों से सजाकर पेश करें.

यहां स्मरणीय है कि जब किशोरों के लिए जासूसी उपन्यास विशेष रूप से लिखे जाएंगे, तब भी, बाजार में घटिया और सेक्सी जासूसी उपन्यास आते ही रहेंगे. किशोर-किशोरियों को उनसे बचाया कैसे जाए?

किसी भी तरह नहीं! क्योंकि—

किसी भी तरह उन्हें 'वैसी' किताबें पढ़ने से बचाया जा नहीं सकता. किशोर-किशोरियां काफ़ी आज़ाद जीवन जीते हैं; उन्हें दूध की बोतल पकड़ा कर पालने में क़ैद नहीं किया जा सकता. वे सड़कों पर और गलियों में घूमते हैं और जो कुछ भी सड़कों पर या गलियों में है, उसके सम्पर्क में आते हैं. चूंकि वे कौतूहली होते हैं, हर अच्छी और बुरी चीज की छानबीन करते हैं. सड़कों और गलियों में बिकने वाले घटिया, सेक्सी उपन्यास, इसी लिए, कभी-न-कभी उनके हाथ अवश्य लगेंगे; और वे उन्हें अवश्य पढ़ेंगे—यदि रोका गया, तो चोरी से. रोकने से तो 'वैसी' किताबों के प्रति उनका कौतूहल और भी बढ़ जाएगा.

इसकी बजाए, आवश्यकता इसकी है कि उनके लिए—खास उनके लिए—अच्छी जासूसी चीजें लिखी और छापी जाएं.

कौतूहली होने के कारण किशोर-किशोरियां जहां घटिया चीजों को उठाएंगे, वहीं अच्छी चीजें भी उठाए बिना नहीं रहेंगे; क्योंकि उनका तो स्वभाव ही है हर चीज को उठाकर देखने और परखने का—अच्छी-बुरी हर चीज.

जब अच्छी चीज सामने आएगी, तो वे उसे पसंद भी करेंगे. खास उनके लिए लिखी गई चीज में वे स्वयं अपनी दुनिया के दर्शन करेंगे और मुग्ध हो जाएंगे. ऐसा सोचना ग़लत है कि सेक्सी उपन्यासों के मुक़ाबले, अच्छे और खास उन्हीं के लिए लिखे गए उपन्यासों को वे पसंद नहीं करेंगे. विश्व के सभी देशों में गंदे वर्णनों की भरमार करने वाले जासूसी उपन्यास तौल-तौल कर लिखे और छापे जाते हैं—और इसके बावजूद उन सभी देशों में बच्चों के विशेष जासूसी उपन्यास खूब पनपे हैं, पनप रहे हैं. यही भारत में हो सकता है, होगा.

जब अच्छे और गंदे, दोनों प्रकारों के जासूसी उपन्यास सामने होंगे, तो किशोर-किशोरियां गंदे उपन्यासों को 'यूं ही टालना' सीख जाएंगे—हालांकि पढ़ेंगे जरूर! कौतूहली जो ठहरे! किंतु वे ही बच्चे, खास उनके लिए लिखे गए जासूसी उपन्यासों को 'यूं ही टालेंगे' नहीं. वे उन्हें रुचि से न केवल पढ़ेंगे, याद भी रखेंगे. खास अपने लिए लिखी गई चीजों को बच्चे कभी टालते नहीं हैं. वे उन्हें गंभीरता से लेते हैं—लेना सीख जाते हैं. अनेक देशों के उदाहरण सामने हैं.

किशोर-किशोरियां जासूसी उपन्यास पढ़कर रहते हैं. उन्हें रोकना व्यर्थ है— और इसी लिए, उनकी मानसिकता को दूषित होने से बचाने के लिए एकमात्र उपाय यही है कि खास तौर पर उन्हीं को नजर में रखकर लिखे गए जासूसी उपन्यास सामने लाए जाएं. जासूसी उपन्यासों के माध्यम से उन्हें नवीनतम वैज्ञानिक चमत्कारों से परिचित कराया जा सकता है. मुसीबत की स्थितियों में अचानक फंस जाने पर छुटकारे की सूझबूझ यदि, जासूसी उपन्यासों के ही माध्यम से, किशोर-किशोरियों में पैदा की जा सके, तो बुराई क्या है?

—मनहर चौहान
एल-34, कीर्तिनगर, नई दिल्ली-15.

पराग

वार्षिक शुल्क

भारत में-पोस्ट द्वारा — रु. ६.५०
विदेश में-समुद्री डाक द्वारा — रु. १०.००

अमरीका —
न्यूयार्क
मेसर्स इण्डिया पब्लिकेशंस लि.,
३००, फिफ्थ एवेन्यू, न्यूयार्क, एन वाई १००१६.

इंग्लैंड —
लंदन
मेसर्स बेनेट कोलमैन एण्ड कम्पनी लि.,
नं. ३, एल्बेमार्ले स्ट्रीट, लंदन डब्ल्यू-१.

ए. बी. सी. मैगजीन डिस्ट्रीब्यूटर्स लि.,
१४३, गोल्डहाक रोड, लंदन डब्ल्यू-१२.

मारीशस —
मेसर्स नालंदा कं. लि., पो. बा. नं. २०२, पोर्ट लुई, मारीशस.

पूर्वी अफ्रीका —
नैरोबी
मेसर्स बुलवर्थस लि., पो. बा. नं. ३०१८४, नैरोबी, कीनिया.

दुबाई —
मेसर्स ज़मनमल एण्ड संस,
पो. बा. नं. १५४५,
रीका, दुबाई,
ट्रुसियल स्टेट्स.

विशेष: निम्नलिखित देशों में पराग की प्रतियां हवाई जहाज द्वारा भेजी जाती हैं. अधिक जानकारी के लिए अपने देश के हमारे एजेंट से संपर्क स्थापित करें.

कुवैत —
मेसर्स ज़मनमल एण्ड संस,
पो. बा. नं. ९९, कुवैत, स्टेट ऑफ कुवैत

दोहा-कातार —
मेसर्स अब्दुल अज़ीज़ नामा एण्ड नूर,
पो. बा. नं. १८६, दोहा-कातार अरेबियन गल्फ.

मलयेशिया —
मेसर्स पी. शिवगुरू बुक डिपो,
पो. बा. नं. २५५, २७, जालान स्काट, कुआला लम्पुर (मलयेशिया)

सिंगापुर —
मेसर्स एस. बालकृष्णन बुक डिपो, ३, करबन रोड, सिंगापुर-८.

हांगकांग —
मेसर्स डेविडसन एण्ड पार्टनर्स लि., नवीं मंजिल, कैज़ट बिल्डिंग,
५८, पाक तई स्ट्रीट, कोवलून, हांगकांग, बी. सी. सी.

कृपया निम्न पते पर एक वर्ष तक पराग भेजें.

जब भी आपके पते में परिवर्तन हो या आपकी कोई जानकारी प्राप्त करनी हो, तो अपने पूर्व पते की चिट पत्र के साथ में अवश्य भेजें.

प्रेषक

.....

.....

.....

.....

चंदे की राशि ड्राफ्ट/चेक/मनीआर्डर द्वारा प्रेषित की जा रही है.

kissekahani.com

कोशी मुश्किल से बस स्टॉप पर आकर खड़ी ही हुई थी कि उसे लगा कोई उसे आवाज दे रहा है. यह आवाज नाम लेकर नहीं, 'ए' की हल्की ध्वनि के साथ लगाई जा रही थी. उसने इधर-उधर घूमकर देखा, एक खिड़की से एक हाथ उसे बुला रहा था. यह खिड़की उसी बंगले की थी जिसके फाटक पर वह रोज बस की प्रतीक्षा करती थी.

कोशी ने पास जाकर देखा, एक पीले चेहरे वाली, दुबली-पतली लड़की खिड़की से लगे बिस्तर पर बैठी थी.

"तुम्हारी बस निकल गई. काफी हॉर्न देती रही. आज देर कैसे हो गई?"

वह लड़की बोल रही थी और कोशी के चेहरे का तनाव धीरे-धीरे कम होता जा रहा था—इतना कि आखिरकार उसने पूछ ही लिया—

"बस छूटने से तुम्हें खुशी हो रही है न? इतना बुरा लगता है स्कूल जाना?"

"हट, बुरा क्यों लगेगा!" कोशी ने कहा और एकदम लौट पड़ी. उसे इतनी शर्म आ रही थी जैसे कोई चोरी पकड़ी गई हो. क्योंकि यह सच था कि बस छूट जाने से कोशी को बेहद खुशी हुई थी. बल्कि वह तो चाहती थी कि उसकी बस रोज छूट जाया करे. पर यह बात किसी और के मुंह से सुनने के लिए वह तैयार नहीं थी.

ऐसा भी नहीं था कि कोशी को पढ़ने से नफरत थी. वह बड़ी ही कुशाग्र-बुद्धि छात्रा थी, और बोर्ड की आठवीं की परीक्षा उसने प्रथम श्रेणी में पास की थी. पर उसके गाँव में लड़कियों की पाठशाला आठवीं तक ही थी और उसकी माँ लड़कों के स्कूल में उसे पढ़ाना नहीं चाहती थी, इसी लिए मामा जी उसे अपने पास शहर ले आए थे.

शहर के बड़े स्कूल में पढ़ने की खुशी में कोशी को माँ-बाप का बिछोह भी नहीं अखरा था. पर पहले ही दिन स्कूल की विशाल बिल्डिंग को देखकर वह सहम गई थी. रही-सही हिम्मत कक्षा की लड़कियों को देखकर छूट गई थी. लड़कियों ने उसे इस तरह घेर लिया था मानो वह कोई अजायबघर की चीज हो. उसके नाम पर ही कई लड़कियां खिलखिला कर हँस पड़ी थीं. तब से वह मानो उनके विनोद की वस्तु बन गई थी. उसकी हर बात की मजाक उड़ाई जाती, बोलने की नकल उतारी जाती. बरसात होने के कारण अक्सर वह छाता लेकर जाया करती थी. पुस्तकें भी वह और छात्राओं की तरह हाथ में नहीं, बस्ते में ले जाती थी. इस लिए उसका नाम 'छाता-बस्ता' रख दिया गया था. हमेशा हर काम में आगे रहने वाली कोशी यहाँ आकर घुन्नी हो गई थी. वह चुपचाप पिछली बेंच पर बैठी रहती.

इसी लिए उसे बस छूट जाने की खुशी थी, जैसे एक दिन की कैद कम हो गई हो.

ऐसी छुट्टी रोज तो मनाई नहीं जा सकती थी; दूसरे दिन फिर स्कूल जाना ही था. बस स्टॉप पर वापस आकर उसने देखा, खिड़की पर दो आँखें चिपकी हुई हैं. उसे देखकर वह मुस्कराई. कोशी भी मुस्कराकर रह गई. संकोचवश हाथ भी न हिला सकी.

पर उस दिन दिनभर उसी की बात मन में घूमती रही और अगले दिन वह जरा जल्दी ही तैयार होकर स्टॉप पर आ गई. उसके पास जाते ही वह बोली—"आज जल्दी आ गई?"

"कहाँ, रोज ही का तो समय है."

"नहीं, ठीक दस मिनिट पहले आई हो."

कोशी मुस्कराकर रह गई—"तुम्हें क्या मेरा समय याद रहता है?"

"क्यों नहीं, रोज देखती जो हूं."

"रोज?" कोशी को आश्चर्य हुआ.

एक भावभीनी कहानी

वह

kissekahani.com

kissekahani.com

★ मालती जोशी

लड़की

"हाँ, रोज़. अच्छा अपना नाम तो बताओ. मेरा नाम मृणाल है."

"मृणाल . . . ! बड़ा प्यारा नाम है. तुम लोग बंगाली हो?"

"नहीं, सिर्फ नाम बंगालियों का-सा है. पर तुमने अपना नाम तो बताया ही नहीं . . ."

कोशी कुछ क्षण चुप रही, फिर धीरे से बोली—"मेरा नाम कौशल्या है. बड़ा पुराना नाम है न?"

"नाम भी कहीं पुराने होते हैं. वे तो जैसे आदमियों के साथ जुड़ जाते हैं वैसे ही हो जाते हैं. अब देखो न, कौशल्या नाम मुझे बहुत प्यारा लगता है. मेरी एक आंटी हैं न, यही नाम है उनका. और . . . और वह मुझे बहुत अच्छी लगती हैं."

"सच!" कोशी ने कहा. उसके मन से जैसे एक बोझ-सा उतर गया. उस दिन स्कूल में उसे देखकर फिर वही दोहे पढ़े गए, तो उसे बुरा नहीं लगा. क्योंकि उसे मालूम था कि किसी को यह नाम बड़ा प्यारा लगता है.

अगली सुबह भी वह अनजाने जल्दी ही

kissekahani.com

तैयार हो गई, तो मामी जी ने पूछ ही लिया—"क्या बात है, कोशी, आज भी जल्दी जाना है?"

"जी, वो बस का समय बदल गया है न."

"अरे, मुझे बताया भी नहीं," और मामी जी के हाथ और तेज़ी से रसोई निपटाने लगे. यों उनसे इस तरह झूठ बोलते हुए कोशी को बड़ी शर्म आई, पर वह क्या करे? ज्यादा से ज्यादा समय वह मृणाल के साथ बिताना चाहती थी और जब वह स्कूल वापस लौटती थी, तो खिड़की प्रायः बंद ही मिलती थी. इसलिए जाते समय ही उससे बातचीत का मौका मिल सकता था.

उस दिन खिड़की के पास पहुँचते ही एक तेज़ गंध ने उसका स्वागत किया. उसे नाक-भौं सिकोड़ते देख मृणाल ने कहा—"इंजेक्शन की गंध है; अभी अभी लगाकर गई है सिस्टर."

"क्यों, बीमार हो क्या?"

"और क्या . . . ! इंजेक्शन रोज ही लगते हैं, कभी चार कभी पांच," मृणाल ने इत्मीनान से कहा. बाप रे, कोशी का तो इंजेक्शन के नाम से ही दम निकलता था! बच्चों से भी ज्यादा शोर मचाती थी वह. और यह मृणाल है . . . तभी कोशी का ध्यान मेज पर तरतीब से रखे हुए इंजेक्शन, शीशियों, गोलियों, हाटवाटर बैग, टेंपरेचर चार्ट, फीडिंग ग्लास, थर्मामीटर आदि की ओर गया. वह रोज इन्हें देखती थी पर आज तक उसका ध्यान ही इस तरफ नहीं गया था. मृणाल के पीले चेहरे को देखकर उसने पूछा—"बहुत दिनों से बीमार हो?"

पर जवाब नहीं दिया मृणाल ने, सिर्फ फाटक की ओर इशारा कर दिया. कोशी की समझ में कुछ नहीं आया. तभी उसके कानों में बस का हॉर्न सुनाई दिया, जो शायद मृणाल ने पहले ही सुन लिया था.

उस दिन भी कोशी का मन दिनभर हल्का-फुल्का रहा.

मृणाल की बातों में सचमुच जादू था. मन का बोझ जाने कहां हवा हो जाता था. खिड़की की यह गपशप कोशी के लिए दिनभर का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्यक्रम होता. उसे एक श्रोता मिल गया था, जिसको वह अपने घर की, गांव की, माता-पिता की, स्कूल की बातें सुना सकती थी. स्कूल में उसकी कोई सहेली नहीं थी और मामा जी के बच्चे छोटे-छोटे थे.

मृणाल अपने बारे में बहुत कम बोलती. बस कोशी इतना ही जान पाई थी कि वह कई महीनों से बीमार है और डॉ. मुकर्जी का इलाज कराने आई हुई है. बंगले में वह अपनी मां और एक नौकर के साथ रहती थी. पिता जी कभी-कभार बंबई से आकर उसे देख जाते थे.

कोशी ने अक्सर देखा था कि बीमार लोग अपनी बीमारी की दास्तान सुनाने के लिए बहुत व्याकुल रहते हैं. पर मृणाल अपनी बीमारी को छोड़कर हर विषय पर बात करती थी. उसके सहानुभूतिपूर्ण व्यावहार से कोशी को बड़ी राहत मिली थी. उसने कक्षा की लड़कियों के अन्यायपूर्ण व्यावहार की बातें उसे बतलाई थीं. सुनकर मृणाल ने कहा था—"तुम तो इतनी होशियार हो, तब क्लास में फटाफट जवाब दिया करो. सब पर धाक बैठ जाएगी!"

"लेकिन वे तो मेरे मुंह खोलते ही हंसना शुरू कर देती हैं!" कोशी ने उदास होकर कहा.

"अच्छा," मृणाल बोली, "मेरे साथ प्रैक्टिस करके जाया करो. फिर तुम्हारा डर दूर हो जाएगा. आज क्या याद करने को कहा है?"

कोशी ने ट्रांसलेशन की कॉपी खोलकर दिखाई.

"अच्छा यह ट्रांसलेट करो—मेरा स्कूल पहाड़ी पर है," मृणाल ने टीचर जी के-से अंदाज में कहा.

"माई इस्कूल इज. . ." कोशी बोलते-बोलते रुक गई. उसे लगा, मुस्कान की एक दबी रेखा मृणाल के चेहरे पर खिंच आई है. पर शायद उसका यह भ्रम था. क्योंकि दूसरे ही क्षण गंभीर होकर वह बोली—"अब समझ में आया, लड़कियां तुम पर नहीं, तुम्हारे उच्चारण पर हंसती हैं. पहले इसे ठीक करना पड़ेगा."

और इसके बाद सचमुच उसने कोशी को सुधारने-संवारने का जैसे बीड़ा उठा लिया. कस्बे से आई हुई सीधी-सादी लड़की उसके हाथों निखरने लगी. अंग्रेजी संभाषण-कला की कक्षा के साथ रोज उस खिड़की पर वेश-भूषा, केश-सज्जा के पाठ भी दिए जाने लगे. कोशी का आत्मविश्वास धीरे-धीरे जगने लगा; उसके बोलने में, चलने में वह प्रतिबिंबित होने लगा. मामी जी अक्सर कहती भी—"अपनी कोशी अब कितनी स्मार्ट लगने लगी है!"

कोशी में आए इस परिवर्तन से स्कूल का वातावरण भी बदलने लगा. जहां अध्यापिकाओं में उसकी कुशाग्रता की चर्चा होने लगी, वहां लड़कियों पर भी उसकी बुद्धिमानी का सिक्का जमने लगा. उससे मित्रता करने के लिए बहुत-सी लड़कियां लालायित हो उठीं. स्कूल में अब उसे उतना अकेलापन महसूस नहीं होता था.

इस सुखद परिवर्तन का श्रेय मृणाल को था. इस उपकार के बदले कोशी को स्कूल की अपनी पूरी रिपोर्ट उसे देनी पड़ती. क्लास में दिए हुए होमवर्क से लेकर क्लास में दी गई सजाओं तक में उसकी दिलचस्पी होती थी. वह जानना चाहती कि शुभा ने कौनसा नया गीत सीखा है; रागिनी आज कैसी साड़ी पहनकर आई थी; सरोज को निबंध पर कितने मार्क्स मिले; दमयंती बहन जी ने किसको क्लास आउट किया. . . .

वह कुछ इस उत्सुकता से कुरेद-कुरेद कर पूछती कि कोशी को उसे निराश नहीं करते बनता था. कई बार कोई बात होती भी नहीं थी, फिर भी कोशी मन से गढ़कर किस्से सुना देती थी. उन मजेदार किस्सों को सुनकर हंसते-हंसते उसका पीला चेहरा लाल हो आता था, तो कोशी को बड़ी तृप्ति होती थी.

उसे पता था कि मृणाल को 'प्लूरिसी' हो गई है. उसने मामा जी से पूछा था इस बीमारी के बारे में. उनसे सारा वर्णन सुनकर वह सिहर उठी थी. उसे आश्चर्य होता था, मृणाल इतनी सारी पीड़ा हंसते-हंसते कैसे सह लेती है. उसके दुःख के सामने उसे अपनी सारी तकलीफें बेहद छोटी जान पड़तीं.

●

एक बार खिड़की लगातार बंद ही रही. कोशी का मन बेचैन हो उठा, पर घर के अंदर जाकर पूछने का साहस उसे नहीं हुआ. अपनी छटपटाहट से ही उसने कल्पना कर ली कि उसकी छुट्टियों में मृणाल कितनी परेशान हो जाती होगी. वह तो अपने घर-परिवार में सब कुछ भूल जाती है, पर बेचारी मृणाल के लिए तो सिवाय रेडियो और किताबों के कोई साथी भी नहीं है. मां अक्सर पूजा में या रसोई में रहतीं. मृणाल की बीमारी के कारण उनका पूजापाठ कुछ और बढ़ गया था और लड़की एकदम अकेली पड़ जाती थी.

तीसरे दिन जब खिड़की खुली हुई मिली, तो उसे जरा चैन आया. उस दिन मृणाल लेटी हुई थी, चेहरा बेहद थका हुआ था, पर उसे

मजबूरी—

"क्या करूं, यार, पिता जी अल्सेशियन कुत्ता लाकर ही नहीं दे रहे; सो इसी से मन बहलाना पड़ रहा है!"

kissekahani.com

देखकर वह मुस्कराए बिना नहीं रह सकी.

"क्या तबीयत ठीक नहीं है?" कोशी ने पूछा.

"तबीयत ही ठीक होती, तो तुम्हारे इस बड़े-से शहर में कौन आता!" उसने हमेशा की तरह लापरवाही से कहा.

मां मोसंबी का रस निकालती हुई पास ही बैठी थी. बोली, "परसों पानी निकाला था न, बिटिया. बड़ी तकलीफ होती है. एकदम थक जाती है बेचारी."

बात करते हुए बेटी की सारी तकलीफें जैसे उनके चेहरे पर उभर आई थीं. कोशी का मन भी भर आया. और उधर मृणाल पूछ रही थी—"ए, तुम्हारे यहां आज डिबेट है न?"

कोशी ने सोचा, अजीब याददाश्त है इसकी. न इसे परीक्षा की तारीख भूलती है न टेस्ट की. और तो और कोशी के सारे भाई-बहनों के नाम, उम्र, कक्षाएं, जन्म-दिन तक उसे रट गए थे.

"अरे, मैं क्या पूछ रही हूं? डिबेट में नाम दिया?" मृणाल ने फिर पूछा.

कोशी ने सिर हिला दिया.

"बस कर दिया न घोटाला! मैं जरा-सी बीमार क्या पड़ गई. . . ."

"लेकिन, मीनू, मुझे बोलना कहां आता है?"

"क्यों नहीं आता? मेरे साथ तो. . ."

"तुम्हारे साथ बात अलग है. वहां स्टेज पर . . ."

"स्टेज पर क्या हव्वा बैठा होता है?"

"लेकिन, मीनू. . . ."

"नो आर्ग्यूमेंट," उसने रोब से कहा. "तुम्हें बोलना ही पड़ेगा. ज्यादा से ज्यादा यही तो होगा न कि लड़कियां हंसेंगी, हंसने दो."

"हुंह, हंसने दो." कोशी को इतना गुस्सा आया कि . . .

खुद तो यहां आराम से लेटी रहेगी, वहां नाक मेरी उड़ेगी. इसका क्या जाएगा! उस दिन कुछ नाराजी से ही बस में चढ़ी कोशी.

पर पाठशाला में पूरे समय मृणाल का पीला-दुबला चेहरा उसकी आंखों के आगे घूमता रहा. अपनी इतनी सारी तकलीफ के बावजूद भी उसे डिबेट की याद नहीं भूली थी. कोशी को इतना पश्चात्ताप हुआ कि कार्यक्रम के अंत में जब अध्यक्ष ने इच्छुक लोगों से बोलने के लिए कहा, तो वह मंत्र-चालित-सी स्टेज पर चली गई. मन में जरा भी डर नहीं था. सोचा, बहुत होगा सब लोग हंस लेंगे. यूं उसका भाषण बहुत अच्छा भी नहीं हुआ, पर डर तो हमेशा के लिए जाता रहा.

मृणाल की इसी जिद के कारण उसे स्कूल के हर कार्यक्रम में, हर खेल में भाग लेना पड़ता. कई खेल ऐसे थे जिनका उसने नाम भी नहीं सुना था. पहले-पहले संकोच हुआ, पर बाद में उसे खुद ही रस आने लगा. किसी-किसी दिन वह बहुत ही अनिच्छा जाहिर करती, तो मृणाल कहती—"कोशी, ये दिन जिंदगी भर याद आएंगे. अभी जो नहीं कर पाओगी उसके लिए हमेशा तरसती रहोगी."

यह बात कहते हुए उसकी आवाज में कुछ ऐसी आर्द्रता होती कि कोशी का सारा विरोध घुल जाता.

दिन इसी तरह बड़ी मौज में गुजर रहे थे कि फरवरी की एक सुबह कोशी को धक्का-सा लगा. उस दिन मृणाल बड़ी खुश-खुश नजर आ रही थी.

"क्या बात है, मीनू! आज बड़ी खुश नजर आ रही हो?" कोशी ने छूटते ही पूछा.

"ओह, कोशी! आज मैं सचमुच बहुत खुश हूं. पूछो क्यों?"

"बताओ."

"दो बातें हैं—एक तो पापा आए हैं, दूसरे डॉक्टर साहब ने कह दिया है, महीने, पंद्रह दिन में हम लोग वापस घर जा सकेंगे. बस छह-छह महीने में आकर दिखा जाना होगा." खुशी से मृणाल की आंखें चमक रही थीं. आज पहली बार कोशी ने लक्ष्य किया कि मृणाल का चेहरा उतना पीला, उतना दुबला नहीं रह गया था, जितना पहले दिन देखा था.

"यह तो सचमुच बहुत खुशी की बात है. मां से कहो मुझे मिठाई खिलाएं," कोशी ने कृत्रिम उत्साह के साथ कहा, जबकि हकीकत यह थी कि उसका मन एकदम उदास हो गया था. उसे अपने स्वार्थी मन पर शर्म भी आई.

तभी मृणाल के पापा और मां अंदर आए, कोशी ने हाथ जोड़कर नमस्ते की.

"तो यही है हमारी कोशी बेटी?" उन्होंने कोशी के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा. "मुझे मीनू की मां ने बतलाया कि तुमने डॉ. मुकर्जी से भी बढ़कर मीनू का इलाज किया है! उसे एक दिन के लिए भी अकेलापन नहीं महसूस होने दिया. एक बीमार लड़की के साथ इतनी-इतनी देर कौन बैठता है? मैं सचमुच तुम्हारी बहुत-बहुत आभारी हूं. मीनू, अपनी सहेली से कहो कि अब उसके एक नहीं दो घर हो गए हैं. अब वह बंबई जब भी आएगी, हमारे यहां ठहरेगी. बल्कि उसे आना ही पड़ेगा हर गर्मी की छुट्टियों में. ठीक है न?"

"सुन लिया, डॉक्टर साहब!" मृणाल ने शरारत से मुस्कराकर कहा.

कोशी शर्म और संकोच से लाल हो गई. उसका जी हुआ कि मृणाल के पापा जी से कहे—'पापा जी, आप क्या जानें कि किसे किसका धन्यवाद देना है. रही मीनू के इलाज की बात, सो वह अपनी डॉक्टर खुद है. उसकी मस्ती और जिंदादिली के सामने मौत भी हार गई है!'

105/12 दक्षिण तत्या टोपो नगर, भोपाल.

प्रति मास नए पुरस्कार

इस अंक की कहानियां ध्यान से पढ़ें और हमें 20 अगस्त 1971 तक लिखें कि अपनी पसंद के विचार से कौन-कौनसी कहानी आप पहले, दूसरे और तीसरे आदि नंबरों पर रखेंगे. आपको इस प्रकार उन सभी कहानियों पर अपनी पसंद बतानी है, जिनका उल्लेख अतापता में 'सरस कहानियां' के अंतर्गत आया है. जिन पाठकों की पसंद का क्रम बहुमत के क्रम से अधिकतम मेल खाता हुआ निकलेगा, उन्हें हम अच्छी-अच्छी पुस्तकें पुरस्कार में भेजेंगे.

किशोर पाठकों द्वारा इस प्रकार इस अंक की प्रथम स्थान पर चुनी गई कहानियों में से जिस कहानी को सर्वाधिक मत प्राप्त होंगे, उसके लेखक को भी 50 रुपये का एक अतिरिक्त पुरस्कार प्रदान किया जाएगा. अपनी पसंद एकदम अलग कार्ड पर लिखें. पता यह लिखें:

संपादक, 'पराग' (हमारी पसंद प्रतियोगिता नं. 54), 10 दरियागंज, दिल्ली-6

प्रतियोगिता नं. 51 (मई 1971) परिणाम

इस प्रतियोगिता में केवल एक पाठक का हल पूर्णतः सही आया. उनका नाम और पता नीचे दिया जा रहा है; शीघ्र ही उन्हें पुरस्कार भेजा जाएगा :

●राजीवकुमार श्रीवास्तव, द्वारा श्री के. एन. श्रीवास्तव, रेलवे क्वा. नं. आर. बी. सेकंड, 135 सी, छोला रोड, भोपाल (म. प्र.).

किशोर पाठकों द्वारा मई 1971 की प्रथम स्थान पर चुनी गयी कहानियों का मतसंख्यानुसार क्रम इस प्रकार है—

1–रिश्वत एक प्यारी-सी, 2–सीके-पीकेटीके, 3–बुखार, 4–धोखे का जाल, 5–रिवाल्वर की धमकी, 6–रिजल्ट का चक्कर, 7–रूठ-मनौवल, 8–पशु के मारे कौन मरे.

हमें प्रसन्नता है कि प्रथम चुनी गई कहानी 'रिश्वत एक प्यारी-सी' की लेखिका श्रीमती मालती जोशी को इस प्रतियोगिता क्रम में यह तीसरी बार 50 रुपये का अतिरिक्त श्रेष्ठता-पुरस्कार दिया जा रहा है. लेखिका 'पराग' परिवार की ओर से बधाई लें.

kissekahani.com

kissekahani.com

छोटू और लंबू

स्वाधीनता दिवस के उपलक्ष्य में कल गांव में एक बड़ा सम्मेलन है और तुम्हें बुलाया गया है!

खूब!

सम्मेलन में लोगों को इस बात का बखान करना है कि उन्होंने जीवन में कौनसे अच्छे काम किए हैं!

यह तो बड़ा अच्छा कार्यक्रम है, और हम लोग तो अच्छे काम करते ही रहते हैं!

अच्छा, तो कल ज़रूर आ जाना मैं चलता हूं!

हम ज़रूर आएंगे!

थोड़ा जल-पान भी होगा! खूब तैयारी कर के चलेंगे, लंबू!

वह तो है!

स्वाधीनता दिवस को...

भाइयो और बहनो...

kissekahani.com

kissekahani.com

इस स्तंभ के माध्यम से 'पराग' नगर-नगर में एक दर्पण घुमाना चाहता है; जिस में भारत के हर कोने से विकासवान किशोर-वर्ग के दिल की धड़कनें और दिमाग़ की कुलांचे 'पराग' के इन कालमों तक पहुंच सकें. स्तंभ का उद्घाटन बंबई के राम-नारायण रुइया कालिज के हिंदी के प्राध्यापक तथा जानेमाने लेखक डॉ. देवेश ठाकुर कर रहे हैं. बम्बई महानगरी होने के कारण उन्होंने वहां के किशोर को भी तीन वर्गों में बांट दिया है. पहले वर्ग से भेंट-वार्त्ता करके जो परिणाम उन्होंने निकाले हैं वे इस लेख में प्रस्तुत हैं. हमारे विचार भी इन्हीं के समकक्ष हों, यह आवश्यक नहीं है.

—संपादक

आकलनकर्त्ता :

●

डॉ. देवेश ठाकुर

नगर नगर में घूमता आईना :

किशोर-जीवन का

kissekahani.com

मोटर ने घर्र-र घर्र-र की आवाज शुरू कर दी है. बोट में बैठे हुए लड़के-लड़कियों के मन में अपूर्व उत्साह भर गया है. सुनीता ने उसी उत्साह में मजूमदार की पीठ पर धौल जमा दी है. किनारे पर बैठी हुई और नीचे समुद्र की लहरों को अपनी अँजुली में समोती हुई मजूमदार अपनी जगह से चिहुँक कर उचक गई है. उसके सामने बैठा खन्ना बड़े जोर से हँसने लगा है.

और मैं बोट के एक कोने पर बैठा हुआ, चुपचाप, अपने इन किशोर साथियों के आनंद और उल्लास का रस ले रहा हूँ.

अब बोट 'गेट-वे' को छोड़-कर पानी की सड़क पर आगे बढ़ चली है—एलीफेंटा की तरफ.

दस-पंद्रह मिनिट के सामूहिक शोर-शराबे के पश्चात् इस नाव में 'होलीडेइंग' कर रहे नव-युवक-नवयुवतियों के अपने छोटे-छोटे ग्रुप बन जाते हैं. स्कूल-कॉलिजों की छुट्टियाँ हो चुकी हैं. एक निश्चितता सब-के चेहरे पर खिली हुई है. समुद्री पवन बह रहा है, उनके तन-मन के ताप को हरता हुआ. सब खुश हैं.

दाईं ओर मोटर-ड्राइवर के ठीक पीछे बैठी हुई रेशमा (उम्र 17 साल; सांवला रंग, बॉब कट, बैल बॉटम) शबनम सिन्हा से (उम्र 19 साल, एकदम गोरा रंग, कुर्ता-पायजामा, खूब लंबे गहरे काले बाल, बहुत सुंदर तीखी नाक) बातों में मशगूल हो चुकी है.

'इस बार डैडी हमें मसूरी ले जाएँगे,' रेशमा कहती है. 'तुम कहाँ जा रही हो?' वह शबनम से पूछती है.

शबनम बहुत सीधे तरीके से जवाब देती है—'लास्ट इयर हम सब स्विट्ज़रलैंड गए थे, टिकू भैया के पास. (टिकू यानी उमेशचंद्र सिन्हा, जो 'स्विट' में डॉक्टरी पढ़ रहा है.) उनका 'फ़ाइनल एक्ज़ाम था. इस साल शायद बाहर जाना न हो सके. ममी की कमर में दर्द रहता है. हो सकता है, फिर 'स्विट्ज़र' ही चले जाएँ. पापा को बहुत पसंद आया था.'

इनसे कुछ दूरी पर खन्ना बैठा है. शशि कपूर जैसे बाल. सफेद टैरीन की पैंट और सफेद ही बुशशर्ट. जेब के पास लाल रंग का खरगोश बना हुआ. इस साल उसने मैट्रिक की परीक्षा दी है. पिछले चार साल से वह अपनी कंपनी के चार डाइरेक्टरों में से एक है. उसके पास नागरवाला बैठा है. एकदम पतला, सींखचो! टाइट पैंट में.

—'तो कल मार पिटी?' वह बातें जारी रखता हुआ खन्ना से पूछता है.

'अरे नहीं, यार ! हमारे दादा ने पूछा—चोट तो नहीं आई? बस, ममी ने तो बार-बार हमारी 'किस' ली. गाड़ी गैरेज में डाल दी है. अगले हफ्ते मिल जाएगी.'

'लेकिन ऐक्सीडेंट कर कैसे दिया तुमने?' नागरवाला ने जिज्ञासा भरी आँखों से उसे देखते हुए पूछा.

खन्ना ने अपनी बुशशर्ट के कॉलर ठीक कर लिये. फिर बोला—'चेज का लेटेस्ट नॉवेल पढ़ा है—'ड्राइविंग टू द हैल'. बस हीरो दिमाग में घूम रहा था कि गाड़ी फुटपाथ पर चढ़कर लैंप पोस्ट से टकरा गई.'

बोट बहती चली जा रही है. अपरिचित बना हुआ मैं अपने इन हमसफर साथियों की बातों को गौर से सुनता जा रहा हूँ.

मोटर का इंजन शोर कर रहा है—घर्र-र-घर्र-र!

मैं दिलीप रांगणेकर के सामने बैठा हूँ. दिलीप प्रोफेसर दम्पत्ति का इकलौता बेटा है. सम्पन्न. उम्र 19 साल. अगले साल 'आर्किटेक्ट' हो जाएगा.

'तुमने यह कोर्स क्यों लिया?' मैं पूछता हूँ.

'पिता जी चाहते थे, इसलिए.'

'पिता जी क्यों चाहते थे?'

'मेरे अंकल एक बड़े आर्किटेक्ट हैं. कोर्स करने के बाद उनके साथ काम करने लगूंगा, इस लिए.'

'तुमने कभी आज की शिक्षा के सिस्टम के बारे में सोचा है?'

दिलीप थोड़ा सकुचा जाता है, फिर सिर हिला देता है—'नहीं.'

मैं पूछता हूँ—'तुम्हारे पिता के पास काफी पैसा होगा. उस पैसे का तुम क्या उपयोग करना चाहोगे?'

वह थोड़ा गंभीर हो जाता है, फिर कहता है—'मेरी लाइन में बहुत 'स्कोप' है. मैं अपना पैसा कमाऊँगा. पिता जी का पैसा पिता जी का है, मेरा नहीं.'

'और कुछ?' मैं पूछता हूं.

'और यह कि मैं आज़ाद जिंदगी चाहता हूँ, किसी का कोई दखल नहीं.'

kissekahani.com

...एक आकलन

'जैसे?'

'जैसे आज पिता जी और ममी कमाते हैं. मैं उनकी बातों में कोई दखल नहीं देता. कल मैं अपने पैरों पर खड़ा हो जाऊं, तो नहीं चाहूंगा कि कोई मेरी बातों में दखल दे.'

'ममी-पिता जी भी नहीं?'

दिलीप चुप रह जाता है. मैं उसकी चुप्पी का मतलब समझता हूं. मैं फिर पूछता हूं—'और जब तक नहीं कमाते?'

मैंने अभी तक अपने ममी-पिता जी का कभी विरोध नहीं किया. मैं जानता हूं वे जो कुछ करते हैं, मेरे भले के लिए करते हैं.'

'कौन-कौन सी पुस्तकें पढ़ते हो?'

'अपने कोर्स की,' वह कहता है.

'इसके अलावा?'

वह चुप रह जाता है.

'फिल्म-फेयर?' मैं पूछता हूं. वह हंस देता है.

मैं जानता हूं, दिलीप के मन में कहीं न कहीं सिनेमा के प्रति लगाव है. लेकिन इस क्षेत्र में उसका शौक केवल रंग-बिरंगे कपड़े पहनने और हर आध-घंटे के बाद बाल संवारने तक ही सीमित है. वैसे वह गा अच्छा लेता है वॉलीबाल, टेबल टेनिस और कैरम खेलने तथा चित्र बनाने का भी उसे अच्छा अभ्यास है. राजनीति में उसकी कोई दिलचस्पी नहीं है. अखबारों में वह सिर्फ फिल्म और स्पोर्ट्स कॉलम ही देखता है.

प्रेम और विवाह की बात उठने पर वह शरमा गया. प्रेम हो जाए तो बुरी बात नहीं, लेकिन प्रेम करने के लिए वह भटकता नहीं फिरेगा. विवाह के बारे में वह माता-पिता की मरजी को प्राथमिकता देता है, क्योंकि वे 'विवाह कर चुके' होते हैं. अपने लिए वह कोई 'रिस्क' नहीं लेना चाहता. चाह यही है कि ऐशो-आराम से जिंदगी बीते और लोग उसका नाम जानें और उसकी पत्नी खूब-खूब सुंदर हो.'

'क्या तुम अपने दोस्तों, दूसरे लोगों के लिए भी कुछ सोचते हो?'

मेरे इस प्रश्न के उत्तर में उसने कहा कि अभी उसने इस बारे में सोचा ही नहीं कि समाज के प्रति भी उसका कोई कर्तव्य हो सकता है.'

हमारी इस किशोर सहेली का नाम गीता कश्यप है. खूब तेज-तर्रार. एक दम स्मार्ट. अंग्रेजी स्कूल में पढ़ती है. बढ़िया अंग्रेजी बोलती है, स्टाइल से; और उतनी ही अच्छी हिंदी भी. 3-4 भाषाएं और जानती है.

'तुम्हें कभी पैसे की कमी महसूस हुई?' मेरा प्रश्न था.

'नहीं, वैसे तो सब कुछ घर में ही मिल जाता है; लेकिन.' ...

'लेकिन क्या?'

'कभी-कभी एक चीज के लिए एक से अधिक बार कहना पड़ता है.'

'तुम कैसी जिंदगी चाहती हो?'

मेरे इस प्रश्न पर उसकी आंखों में एक रोशनी भर गई.

'ऐक्शनफुल लाइफ. मेरा मतलब 'फुल ऑफ एक्शन' जहां कोई जोखिम से भरा काम करने को मिले!'

'जैसे?'

'मैं पॉयलट या ऐयर हॉस्टेस बनना चाहती हूं या मिलिट्री अफसर.'

मैं देख रहा हूं कि इस लड़की का दिल उमंगों और उत्साह से भरा हुआ है.

उम्र सिर्फ 16 साल. अगले साल मैट्रिक की परीक्षा देगी. स्वस्थ, खिलाड़ी, शरीर सुता हुआ, चुस्त. पैर सुडौल. पिंडलियां खूब कसी हुई. चेहरे पर चमकती हुई विश्वास भरी आंखें.

'तुम्हारे शौक?' मैं पूछता हूं.

'स्पोर्ट्स और नॉवेल रीडिंग—इंग्लिश नॉवेल, बेज के.'

'कैसे लगते हैं?'

'ओह, एक्साइटिंग, फुल ऑफ रियल लाइफ! मैं 300 से ज्यादा नॉवेल पढ़ चुकी हूं.'

'शादी कब करोगी?'

एक क्षण के लिए गीता चुप हो गई. फिर बोली हंसती हुई —'हर आदमी लड़की से यह सवाल जरूर पूछता.'

'फिर भी?' मैं उसे खरोंचता हूं.

इस बार वह बोली—'मेरा शादी करने का कोई इरादा नहीं है?'

मैंने चौंकने का-सा अभिनय करते हुए पूछा—'क्यों?'

'अपनी आजादी मारी जाती है. परसनलिटी डैवलप नहीं हो पाती.'

'लेकिन बहुत-सी महिलाएं हैं जिन्होंने शादी की है और खूब ऊंची उठी है.'

'जैसे ?' गीता का प्रश्न था.

'जैसे इंदिरा गांधी को ही लो,' मैंने कह दिया.

गीता हंस पड़ी. बोली—'आप भी कैसी बातें करते हैं ! इंदिरा गांधी, इंदिरा गांधी अब बनी है. अब, जब कि उनकी आकांक्षा को दबाने वाला कोई नहीं है.'

यह गीता का अपना तर्क था. मैं चुप रह गया.

एक और चित्र : संजीव सिंघानिया का. सिंघानिया का परिवार मारवाड़ी है. वह बहुत भोला, सीधा-सादा लड़का है.

मैं पूछता हूं—'तुम्हें कहीं कोई बुराई नजर नहीं आती?'

'नहीं, जी!' वह बड़ी विनम्रता से कहता है.

'तुम्हारे पिताजी तुम्हें कैसे लगते हैं ?' मैंने सीधा-सा प्रश्न किया.

'बहुत अच्छे,' उस लखपति बाप के बेटे का भी उतना ही सीधा उत्तर था. 'वह हमें बढ़िया खिलाते हैं, बढ़िया पहनाते हैं. हमें कोई अभाव ही महसूस नहीं होता. पढ़ाई के लिए ट्यूशन वाले मास्टर आते हैं. जब भी हमें कोई चीज चाहिए, मिल जाती है. बस आनंद ही आनंद है.'

'तुम पढ़ने के बाद क्या करोगे?'

'जो पिता जी कहेंगे, वही करूंगा.'

'अपने मन से कुछ नहीं?' मैंने पूछा.

सिंघानिया चुप हो गया.

'कौन-कौन सी मैगजीन और किताबें पढ़ते हो?'

(शेष पृष्ठ 51 पर)

kissekahani.com

एक अंतर्भेदी कहानी

अंगूठी की चोरी

दिनेश भौंचक्का रह गया. उसकी समझ में ही न आ रहा था कि वह जाग रहा है या सोते हुए कोई बुरा सपना देख रहा है. उसने एक क्षण के लिए तो इसे अपनी आंखों का धोखा समझा. बार-बार अपनी उंगली टटोल कर देखी. सचमुच ही तो उंगली खाली थी. फिर अंगूठी कहां गई? रात में तो थी. नहीं, ठीक याद नहीं आ रहा. शाम छह बजे तक थी. टिकट खरीद कर सिनेमा हाल में घुसते समय? ... हां, थी ... याद आ रहा है. इंटरवल में देखी थी. देखी क्या, रोब जमाने के लिए उंगली नचा-नचाकर दूसरों को भी दिखाई थी—खासकर उस लड़की को, जो कनखियों से उसे देख रही थी.

हां, उसके बाद बत्ती बुझ जाने पर इस ओर ध्यान नहीं दिया था. तब क्या सिनेमा हाल में ही कहीं गिर गई?

उसने बिस्तरा उलट-पुलट कर देखा. अजीब बात है, कैसे गिर गई? उंगली में भले ही एकदम कसी नहीं थी, तो बिलकुल ढीली भी तो नहीं थी. आसानी से निकलने का सवाल ही नहीं.

वह सोचता जा रहा था और कमरे की एक-एक चीज, एक-एक कोना तलाश रहा था. इस बार तो सचमुच नाक कट जाने वाली बात है. शोभा को क्या जवाब देगा? चाचा और चाची क्या सोचेंगे? उन्होंने कहीं पिता जी को लिख दिया, तो और भी गड़बड़ होगी. उन्हें हरगिज यकीन नहीं आएगा कि अंगूठी खो गई है. यकीन आए भी कैसे, खुद ही तो नक्कू बन चुका है एक बार, शहर भर में उसकी गलती ने उसे बदनाम कर दिया था.

पिता जी ने उसकी आदतों से तंग आकर उसका जेब-खर्च बंद कर दिया था. दिनेश को खाली जेब काट खाने को होती. दो दिन तक धीरज रखे रहा. दोस्त खाते और उसे भी खिलाते. पर उसे हाथ समेटे रहने में मजा न आता; अपमान लगता. तीसरे दिन, जब नहीं रहा गया, तो उसने अपनी अंगूठी गिरवी रख दी थी. सोचा था, एक-दो महीने में पिता जी का गुस्सा ठंडा होगा तो अंगूठी छुड़ा लेगा.

मां ने न जाने कैसे ताड़ लिया? उन्होंने पूछा, "क्यों, दिन्नी, अंगूठी कहां है तेरी?"

वह सकपका गया था. इधर-उधर देखकर बोला था, "वह... वह...अंगूठी....? रमेश है न, वही जो मेरे साथ कुछ दिन पहले आया था... गोरा-गोरा-सा, उसी को दो दिन के लिए दी है. परसों लौटा देगा."

मां तो शायद भूल गई फिर पूछताछ करने को, लेकिन पिता जी ने एक दिन पकड़ा, "क्यों, जनाब, कई दिन से तुम्हारे हाथ में अंगूठी नहीं देख रहा हूं?"

उनके पूछने के ढंग से ही दिनेश का कलेजा मुंह को आ गया था. वह यह भी याद नहीं कर सका कि मां से उसने क्या बहाना बनाया था. अचानक उसके मुंह से निकल गया, "खो गई!"

पिता जी दहाड़ उठे थे, "झूठ बोलता है, सुअर... उसे सोनू सुनार के पास गिरवी रखकर चालीस रुपये कौन लाया?"

बात सोनू सुनार ने ही उड़ाई होगी; मुसीबत दिनेश की आ गई. लोग उसे देखते ही आपस में खुसुर-पुसुर करने लगते. भले ही उनकी बात का विषय कुछ और होता, दिनेश को लगता वे उसी के बारे में कुछ कह रहे हैं. उसे सिर उठाकर चलना मुश्किल हो गया था.

जब पिता जी ने बरेली जाकर पढ़ने का प्रस्ताव रखा, तब दिनेश ने उसे तुरंत मान लिया. और वह पिता जी के दोस्त और अपने 'चाचा' के घर आकर रहने लगा.

kissekahani.com

मां-बाप का दिल ठहरा. बेटा घर से दूर जाकर तकलीफ में न रहे, उसका मन उदास न होने पाए, इसलिए पढ़ाई के खर्च के अलावा एक रुपया रोज जेब-खर्च देने का इंतजाम भी कर दिया था. नए वातावरण में आकर दो-ढाई महीने तो वह एक अच्छे लड़के की तरह रहा. सुबह जल्दी उठकर पढ़ता, समय पर स्कूल जाता, शाम को लौटकर नाश्ता करने के बाद घंटा-डेढ़-घंटा घूमने निकल जाता. वहां से आने के बाद काफी रात गए तक पढ़ता.

इधर चाचा-चाची खुश, उधर मां-बाप संतुष्ट. पर कितने दिन! धीरे-धीरे दोस्त बने—अच्छे भी, बुरे भी. पर अच्छे कुछ दिन में ही अलग-थलग हो लिये. सिनेमा और ताश के शौकीन दिनेश से चिपके रहे. बिजनौर में छूटे मित्र जैसे बरेली में पा लिये दिनेश ने.

एक-एक चीज को बार-बार उलट-पुलट कर देखने में कितनी देर लग गई, इसका दिनेश को पता नहीं चला. हताश होकर और भी बारीकी से अंगूठी की खोज में लगा था कि उसी समय शोभा कमरे में आई, "यह क्या, दिनेश भैया, अभी तक कुल्ला-दातून भी नहीं किया. उधर मां चाय-नाश्ता लगा रही हैं."

दिनेश का गला सूख गया. बड़ी मुश्किल से कहते बना, "अभी करता हूं."

"लेकिन यह कर क्या रहे हो?" शोभा ने सारे कमरे में सामान बिखरा देख पूछा.

"कुछ नहीं . . . कुछ भी तो नहीं. . ."

"वाह, भैया, वाह! सारा सामान फैला रखा है और फिर भी कह रहे हो—कुछ नहीं!"

"अरे, ऐसे ही. . .दरअसल सब चीजें पहले से ही तितर-बितर थीं. कई दिन से ठीक करने की सोच रहा था. खैर, चल, पहले चाय पी लें." दिनेश पर अंगूठी को लेकर इतनी घबड़ाहट सवार थी कि बटन न मिलने की बात भी न बना सका. कहीं, इसी बहाने अंगूठी की याद न आ जाए शोभा को.

शोभा ने जाते-जाते भी कमरे को भरपूर नजर से देखा.

दिनेश मंजन के लिए कमरे से निकला तो बहुत चिंता में था. क्या करे? कैसे शोभा की अंगूठी लौटाए? आज न सही, दो-तीन दिन बाद तो मांगेगी ही. तब क्या जवाब देगा? अगर कहे—खो गई, तो बात बिजनौर तक पहुंचेगी. पिता जी को क्या विश्वास आएगा? कैसे करेंगे विश्वास? वह अगली गाड़ी से ही बरेली आ पहुंचेंगे और चाचा-चाची और शोभा के सामने ही कहना शुरू कर देंगे, "झूठा, मक्कार. . . बता, पराई अंगूठी किसके पास गिरवी रखी है?"

उस बार उनको 45 रुपये भरकर अंगूठी छुड़ानी पड़ी थी. इस बार भी अपना सम्मान रखने की खातिर रुपये चुकाने को तैयार हो जाएंगे. वह किसी तरह नहीं मानेंगे कि अंगूठी सचमुच खो गई है. विश्वास तो दिनेश ने अपना खुद ही खोया है, उनका क्या दोष.

★ अवध अनुपम

उसने तय किया, जैसे भी हो वैसी ही एक अंगूठी खरीद कर लानी होगी.

मंजन करके कमरे में लौटा आ रहा था कि चाची ने आवाज देकर बुला लिया. रसोईघर में चाचा और शोभा भी थे. वह उनके पास जाकर बैठ गया. उसे मुंह उठाकर उनकी ओर देखने का साहस नहीं हुआ. चाची ने सबके आगे नाश्ते की प्लेटें और चाय के कप रख दिए. वह भी सिर झुकाए खाने लगा.

चाचा ने प्रेम भरे स्वर में पूछा, "बहुत उदास हो, दिनेश, क्या हुआ? किसी से झगड़ा हुआ है क्या?"

"जी. . .जी कुछ नहीं हुआ," कह-कर उसने मुस्कराने की कोशिश की, पर होंठ खुले के खुले ही रह गए, मुस्कराहट नहीं आई.

चाची ने उसके सिर पर लाड़ से हाथ फिराते हुए कहा, "बेचारे को घर की याद आ रही होगी. क्यों, दिनेश?"

दिनेश का मन भर आया और उसे लगा कि आंखें छलछला उठेंगी. वह इतना प्रेम मिलने पर भी अपने को एकदम अकेला और असहाय पा रहा था. जैसे-तैसे चेहरे पर बनावटी हंसी लाकर बोला, "यह भी तो मेरा ही घर है, आप लोग भी तो मुझे बहुत प्रेम करते हैं."

अब शोभा बोली, "हूंऊहूं, दिनेश भैया, यह तुम गलत कह रहे हो. तुम इस घर को अपना घर कहां समझते हो?"

"सचमुच, मैं इसे अपना घर समझता हूं," दिनेश ने जोर देकर कहा.

"अगर यह बात होती, तो रात के दस-दस बजे तक बाहर क्यों घूमते रहते?" शोभा ने शिकायत की.

वह दिनेश से उम्र में एक साल छोटी थी, पर कभी-कभी हुक्म भी चला लेती थी. जब पिता जी ने उसे अंगूठी लाकर दी थी, तब पहन कर सीधी दिनेश के पास दौड़ी गई थी. फिर आग्रहपूर्वक उसे दिनेश की उंगली में पहनाकर कहा था, "वाह, कितनी सुंदर लगती है!"

kissekahani.com

दिनेश कुछ देर बाद अंगूठी उतारकर उसे देने लगा था, पर शोभा ने ज़िद की, "एक दिन पहने रहो न! तुम्हारी उंगली में चढ़कर, अंगूठी की ही सुंदरता बढ़ी है, न कि तुम्हारी उंगली की!"

बातें बनाना खूब जानती थी वह. स्कूल दोनों के अलग-अलग थे, पर कक्षा एक ही थी. कभी-कभी तो दिनेश की परीक्षा लेने बैठ जाती और जब उसे अपने प्रश्नों का संतोषजनक जवाब न मिलता, तो मीठी झिड़की भी देती. कहती—"यह क्या, तुम तो एकदम कोरे हो! पढ़ाई में मन क्यों नहीं लगाते?" दिनेश हंसकर टाल जाता. सोचता, और निश्चय भी करता कि डटकर पढ़ना चाहिए. लेकिन किताब हाथ में लेते ही ध्यान कहीं दूर चला जाता.

दिनेश ने शोभा की बात रख ली थी. सोचा, ठीक है दो दिन बाद प्रशांत के जन्म-दिन की दावत में जाना है, उस दिन अपना रोब जमाने में काम देगी.

स्कूल जाने लगा तो चाची खाने का डिब्बा और एक रुपये का नोट थमा गई. मन में एक पल को भी चैन न था. अंगूठी उसकी आंखों के सामने एक भयंकर प्रश्न-चिह्न बनकर घूम रही थी. एक रुपया रोज जोड़े, तब भी चार-साढ़े चार महीने लगेंगे अंगूठी के लायक रकम जुटाने में. तब तक क्या शोभा अंगूठी नहीं मांगेगी? चाचा या चाची ही पूछ सकते हैं. शोभा को तो चलो मना लेगा, लेकिन उनसे क्या कहेगा?

पहले भी स्कूल उसके लिए कभी आकर्षण का केंद्र नहीं रहा था. पीछे से कोई धक्का देने वाला न होता तो किताबों का बोझ लादना वह बेकार समझता. यह बात नहीं कि उसने पढ़ाई से चिढ़ने की अपनी आदत को कोसा न हो कभी. मन टटोल कर कई बार देखा. उसे पता चला कि दिल में कहीं न कहीं पढ़ने की तरफ लगाव है जरूर, लेकिन दिल का बाकी हिस्सा सब ओर से आजादी, स्वच्छंदता, मौज-मस्ती, खेल-कूद में लगा रहना चाहता है. ताश देखते ही कापियां-किताबें बोझ बन जाती हैं. सिनेमा के आगे चाट-पकौड़ी बेस्वाद हो जाती हैं. पहले ताश, फिर सिनेमा, फिर चटपटी चीजें. गपशप में पैसे नहीं लगते, इसलिए हर समय अच्छी है.

क्लास में उसने सुंदर से फुसफुसाकर पूछा, "कुछ दिनों के लिए पंद्रह रुपये उधार दोगे?"

सुंदर खिलखिलाकर हंस दिया, "यार, चील के घोंसले में मांस खोज रहे हो. पंद्रह रुपये तो बड़ी बात, पंद्रह पैसे गांठ में होते हैं तो कुलबुलाते हैं और अंत में चाट-वाट में उड़ जाते हैं."

प्रशांत से पूछने पर जवाब मिला, "बाई-गॉड, कानी कौड़ी पास नहीं है. डैडी-मम्मी से चार आने मांगता हूं, तो चालीस बातें सुनाते हैं. एक घंटा उपदेश देते हैं—बाबा, बाहर की चीजें खाने से स्वास्थ्य खराब होता है, बच्चे बिगड़ जाते हैं. . . ."

इन दोनों साथियों के बारे में दिनेश को अच्छी तरह पता था कि उनके गुल्लक नोटों और रेजगारी से भरे रहते हैं, यह सत्य उन्होंने खुद ही उसे एक-दो बार दिखाया था. बड़े घर के लड़के थे. कुछ खाते थे, कुछ जोड़ते थे. दिनेश ने अपने उन कई दूसरे साथियों से भी यही सवाल दुहराया, जिनका उसके एक रुपये में हिस्सा होता था. उसने कभी अकेले खाना नहीं सीखा था. जब भी किसी रेस्तरां में जाता, या खोमचे के पास खड़ा होता, तब जो खुद खाता, वही अपने साथी को खिलाता. वे भी कभी-कभी उसे खिलाते रहते थे.

लो, यह तरकीब भी बेकार गई, दिनेश ने सोचा. कहां समझ रहा था कि इतने दोस्त हैं, सात ने अगर पंद्रह-पंद्रह रुपये कर्ज में दे दिए तो फिलहाल तो समस्या सुलझ जाएगी, फिर धीरे-धीरे सबका कर्ज चुकाता रहेगा. सात की जगह सतरह साथियों से पूछा और वही एक टका-सा सबका जवाब रहा.

आखिर में जिस साथी ने उसका दिल तोड़ा था, उसपर वह बुरी तरह बिफर उठा था, "यही है तुम लोगों की दोस्ती? खा के मौके पर मुंह बाकर लपके आओगे. ताश खेलने में खुशामद करके उधार मांगोगे और फिर चुकाओगे भी नहीं. सिनेमा देखने के लिए साथी हो, लेकिन मुसीबत में मुंह फेर लेने में देर नहीं लगी."

विजय ढीठ था, बोला, "देखो, दिनेश, यह दुनिया का रिवाज है. तुमने पढ़ा नहीं उस पनवाड़ी की दूकान पर क्या लिखा है? 'उधार मुहब्बत की कैंची है.' फिर तुम तो जानते हो, हम न तो नौकरी करते हैं और न ही कोई धंधा. जो थोड़ा कुछ जोड़ते हैं, उसपर हमारे घर वालों की निगाह रहती है. एक पैसा भी कम होता है तो जवाब मांगने लग जाते हैं, फिर यहां तो रुपयों का मामला है."

दिनेश को यह चिकनी-चुपड़ी बातें असह्य लगीं, पर कुछ बोला नहीं. उसकी निराशा बढ़ ही रही थी. कोई रास्ता नहीं दिख रहा था. उपाय बस था तो एक ही—अब वह उस घर में नहीं जाएगा. कहीं दूर भाग जाएगा. लेकिन . . .लेकिन . . . यही 'लेकिन' उसे यह भी नहीं करने दे रही थी. सबकी आंखों में गिरना उसे मंजूर था, शोभा उसे बुरा समझे यह मंजूर नहीं. 'अंगूठी लेकर भाग गया, चोर कहीं का!'—शोभा के स्वर में ये शब्द उसके कान में गूंजने लगे.

वह चल पड़ा तो विजय ने पुकारा, "सुनो, दिनेश, एक तरकीब हो सकती है. तुम्हारे पास वह अंगूठी थी न, उसे किसी मारवाड़ी के पास रखने से रुपये मिल जाएंगे. तुम्हारा काम भी चल जाएगा और बाद में पैसा भर देने पर अंगूठी मिल जाएगी. मामूली ब्याज लगेगा."

यह बात उसके दिल में छुरे की तरह उतर गई. वह तड़प उठा—पिछली बात याद आ गई. उसी तड़प में उसके मुंह से निकल गया, "यही तो मुश्किल है, विजय. वह अंगूठी पराई थी, मेरी बहन की थी. मुझसे खो गई है और इसी लिए . . . और इसी लिए तुम सब से . . ." आगे उससे बोला न गया. "खो नहीं गई, कुछ और?" विजय ने कटाक्ष किया. यह सुन दिनेश को रुलाई फूट पड़ने को हुई, तो वह वहां ठहर न सका. उसे अपने चारों तरफ भयानक अंधेरा छाया मालूम हुआ. उस अंधकार में जो आवाजें गूंज रही थीं, वे कोमल होने पर भी तीखी बनकर उसके दिल में चुभ रही थीं.

वह स्कूल के अहाते से बेसुध-सा बाहर निकलकर आगे बढ़ने लगा, तो दो खोमचे वाले एक साथ पुकारने लगे, "आओ, बाबू, चमचम आज बहुत बढ़िया बनी है! आओ, बाबू, आलू की टिकिया तैयार है, एकदम लाल हो रही है!"

उन आवाजों में आज कोई खिंचाव न था. साथ में लाया हुआ खाना भी वैसा ही बंद था. न भूख थी, न चटपटी या मीठी चीज खाने की इच्छा. एक ही चिंता, एक ही प्रश्न दिमाग़ में आंधी बनकर छाया था—अंगूठी कहां से दूं?

●

इंजन की सीटी का कर्कश स्वर कान में पड़ने पर उसे होश आया—अरे वह कहां आ गया? ढाई मील तक पैदल चलता रहा और उसे होश ही नहीं कि किधर जा रहा है! स्टेशन पर उसका क्या काम? उसने अपने से ही प्रश्न किया—'बिजनौर जाओगे?' जवाब भी खुद ही दे लिया, 'नहीं वहां हरगिज नहीं.' फिर सवाल उठा, 'तो कहीं और भाग जाने का इरादा है?"

'हां! लेकिन कहां?'

'कहीं भी, जहां तुमसे कोई अंगूठी न मांगे.'

'नहीं—नहीं. मैं चोर नाम धरा कर कहीं नहीं जाऊंगा. मैं जैसे भी होगा, शोभा की अंगूठी लौटाऊंगा.'

'तुम्हारे किसी साथी ने तो तुम्हारी मदद की नहीं. फिर तुम्हारा कौन है? न मां-बाप तुम्हें कुछ देंगे और न ही चाचा-चाची. उल्टे तुम पर सब गुस्सा करेंगे. चोर कहलाओगे, अपमान सहना पड़ेगा.'

दिनेश का अंग-अंग सिहर उठा. डांट-फटकार तो उसने कितनी ही सही थी, अपनी चीज गिरवी रख आने का अपमान भी झेला था. अब क्या पराई चीज की चोरी का . . .

kissekahani.com

आगे नहीं सोचा जा सका उससे. कुछ दूर पड़ी एक बेंच पर जाकर वह बैठ गया. एक ओर मन आगे बढ़कर कहीं की भी गाड़ी में बैठ जाने को उकसा रहा था, दूसरी ओर शोभा का स्वर 'चोर' उसे जंजीर में बांधे हुए था.

अचानक वह चौंक उठा. सामने से चाचा आ रहे थे. उन्होंने उसे वहां बैठे देखकर आश्चर्य से पूछा, "अरे, तुम यहां कैसे? स्कूल नहीं गए?"

"आज मन नहीं लगा स्कूल में," दिनेश ने कहा.

"चलो, घर चलकर शोभा के साथ कुछ खेलो, बातें करो. इधर-उधर क्यों मारे-मारे फिर रहे हो ?"

वह चुपचाप उनके साथ घर चला आया. रास्ते में मन में तय कर लिया कि शोभा को अंगूठी खो जाने की बात बता देगा. अगर उसने दया की, तो धीरे-धीरे सब ठीक हो जाएगा.

शोभा स्कूल से आकर खाना खा रही थी. वह झट अपने पिता का आंखों ही आंखों में कोई संकेत पा अपनी थाली साथ ले दिनेश के कमरे में जा पहुंची. स्नेह से बोली, "खाना खाओगे, भैया? मां से कहूं लाने को?"

"मेरे पास है," कहकर दिनेश ने किताबों के साथ रखा खाने का डिब्बा दिखा दिया.

"अरे, तुमने खाया नहीं, चलो, चलो जल्दी खा लो. मैं पानी लिये आती हूं." वह भागी पानी लाने को.

इच्छा न होने पर भी दिनेश को निवाले ठूंसने पर मजबूर होना पड़ा. शोभा ने उसका यह हाल देखकर पूछ लिया, "आखिर तुम्हें हुआ क्या है, भैया? सुबह से ही बहुत परेशान हो."

दिनेश से उसकी उदासी का कारण सुन शोभा के मुंह से निकल गया, "हाय राम! यह क्या कह रहे हो? अंगूठी कहां खो गई? कैसे खो गई? यह तो बड़ी मुश्किल हुई."

"तुम किसी तरह दो महीने तक बात नहीं संभाल सकतीं, शोभा? फिर मैं वैसी ही अंगूठी ला दूंगा," दिनेश याचना के ढंग से बोला.

"यही तो मुश्किल है. अगले महीने से अगले महीने की सात तारीख को मामा की शादी है. तब अंगूठी हाथ में होनी ही चाहिए. इससे पहले तो जैसे-तैसे मां को बहका लूंगी."

"यानी करीब डेढ़ महीना है," दिनेश ने चैन की सांस लेते हुए कहा, "इतना वक्त भी काफी है. मैं तब तक जी-जान लड़ाकर रुपये जोड़ूंगा, नौकरी करूंगा, मेहनत करूंगा. तुम चिंता न करो."

"लेकिन डेढ़ सौ रुपये बहुत बड़ी रकम है, भैया. मेरे पास अठारह रुपये हैं वह मैं देने को तैयार हूं. पांच-सात रुपये तब तक और जुड़ जाएंगे. लेकिन इतने से . . . क्यों, भैया, हम पिता जी से सच-सच कह दें न? वह ताऊ जी को खबर भी न होने देंगे और तुमसे भी कुछ न कहेंगे."

"नहीं-नहीं, शोभा, तुम्हें मेरी कसम, मैं सब संभाल लूंगा. मेरी अच्छी बहन, कहना नहीं."

"जैसी तुम्हारी मर्जी. पर तुम अगर इसी तरह से उदास रहे, तो सारी पोल खुल जाएगी," शोभा ने डांटने के ढंग से कहा. दिनेश ऊपरी मन से हंस दिया. उसे लगा कि अपने चारों ओर जो अंधेरा वह देख रहा था, वह शोभा ने एकदम भगा दिया है.

दिनेश खा-पी कर बाहर निकला. मन में उत्साह और विश्वास था. पांचवें-छठे दर्जे के बच्चों को पढ़ाने के लिए दो-तीन ट्यूशन मिल जाएं तो चुटकी बजाते समस्या हल हो जाएगी. एक घर का दरवाजा खटखटाया, "मास्टर रखेंगे क्या?" जवाब मिला, "बच्चे ऊंचे दर्जे में पढ़ते हैं." दूसरे घर पर पढ़ने की उम्र के बच्चे नहीं थे, तीसरी जगह पहले से ही कोई मास्टर लगा था, चौथी जगह साफ 'नहीं' कह दिया गया. तीन घंटे के अंदर चालीस-बयालीस दरवाजे टटोल लिये. गहरी निराशा से एक बार फिर उसके पैर वजनी हो गए.

किसी और तरह का काम करे क्या? क्या बुरा है, परिश्रम और लगन सबसे बड़ी चीज है. और वह एक प्रेस में पहुंचा. "क्या काम जानते हो?" पूछा गया.

कम्पोजिंग? नहीं. मशीन चलाना? नहीं. वहां से भी नाउम्मीद लौटते-लौटते देखा, कुछ बच्चे कागज मोड़ रहे हैं. उससे भी कम उम्र के बच्चे थे. जब वे कर सकते हैं तो दिनेश क्यों नहीं कर सकता? लौटकर फिर मैनेजर से बात की. आखिर बात बनी. मैनेजर ने कहा, "एक हजार फर्मे मोड़ने का बारह आना मिलेगा. यह तुम पर है कि चार हजार फर्मे मोड़ते हो या सिर्फ एक हजार."

उसी समय से डट गया वह. साढ़े तीन घंटे काम करके बारह आने बने. उसे भरोसा था धीरे-धीरे हाथ सध जाने पर वह साढ़े चार रुपये रोज तक बना लेगा. वहां से चलते समय कह आया—अगले दिन पांच बजे से आकर रात के दस बजे तक काम करेगा.

कठिन परिश्रम ने दिनेश को सिखाया कि अशिक्षित मजदूर और शिक्षित अफसर में क्या फर्क होता है. काम दोनों के अच्छे हैं, पर पढ़-लिख कर कुछ बनना श्रेष्ठ है. वह स्कूल भी नियमित रूप से जाने लगा. उसके साथी खेलने-खाने में उसे साथ लेने आए, किंतु वह अपने एक रुपये रोज के जेब-खर्च में से एक पैसा भी खर्च करने को तैयार न था. इसलिए मित्रों को मुंह लटका कर लौट जाना पड़ा. दिनेश दुखी होने के बजाय प्रसन्न ही हुआ. स्वार्थी मित्रों से मित्रहीन होना ही अच्छा.

रात को साढ़े दस बजे पहुंचने पर उस दिन

बुद्धूराम — —सुरती

चाचा ने प्यार से पूछा, "बेटा, सुना है तुम कहीं काम करने लगे हो? इससे तो तुम्हारी पढ़ाई को नुकसान पहुंचेगा. फिर तुम्हें इसकी जरूरत ही क्या है?"

दिनेश ने दृढ़ स्वर में कहा, "चाचा जी, मैं विश्वास दिलाता हूं कि पढ़ाई को नुकसान

(शेष पृष्ठ 57 पर)

kissekahani.com

kissekahani.com

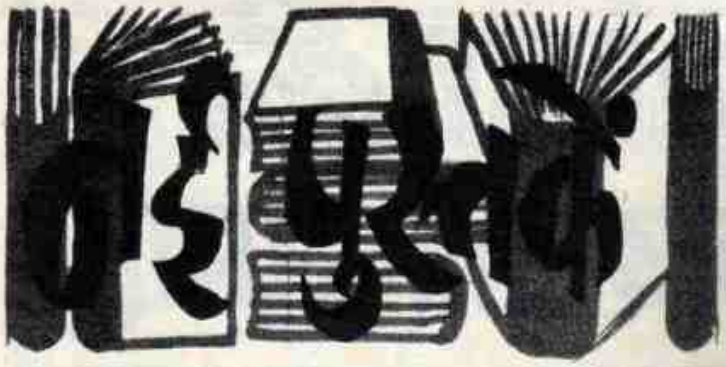

(इस स्तंभ में किशोरों तथा बच्चों के लिए नव-प्रकाशित पुस्तकों की समीक्षा की जाती है जिससे वे अपनी पठनीय सामग्री का चुनाव विवेकपूर्वक कर सकें. समीक्षा के लिए पुस्तकों की दो-दो प्रतियां आनी अनिवार्य हैं.)

● कुबड़ा शहजादा (पृष्ठ संख्या 123); लेखक : प्रेमकिशोर 'पटाखा' ● नन्हे राजकुमार (पृष्ठ संख्या 127); लेखक : जगपति चतुर्वेदी ● बुद्धू से बुद्धिमान (पृष्ठ संख्या 127); लेखक : बालशौरि रेड्डी; मूल्य प्रत्येक का : एक रुपया; प्रकाशक : ज्ञान भारती बाल पॉकेट बुक्स, विशेश्वरनाथ रोड, लखनऊ.

किसी नगर में एक कुबड़ा घूमा करता था. उसका काम था बच्चों को अच्छी-अच्छी कहानियां सुनाना. एक दिन बच्चों ने उससे खुद की कहानी सुनने की जिद की. 'कुबड़ा शहजादा' में उसी की आपबीती प्रस्तुत की गई है. साथ में 'बहुत दिन हुए' शीर्षक से एक और लंबी कथा भी दी गई है जिसमें एक राजकुमार ने अपनी उदारता, त्याग और संघर्ष से दो पड़ोसी राज्यों में मैत्री स्थापित करवाई. दोनों कहानियां पुराने किस्म के जादू भरे किस्सों की तर्ज पर लिखी गई हैं.

'नन्हे राजकुमार' में एक कठोर हृदय और चिड़चिड़े स्वभाव के राजा को उसके नन्हे पौत्र ने किस प्रकार एक लोकप्रिय राजा बना दिया, इसकी कथा सविस्तार प्रस्तुत की गई है. नन्हे राजकुमार का चरित्र अच्छा बन पड़ा है. किंतु इस प्रकार के उपन्यास रोचक होते हुए भी बाल-पाठकों के मन में पुरानी सामंतवादी सभ्यता को फिर से लोकप्रिय बनाने का प्रयत्न करते जान पड़ते हैं.

किसी समय दक्षिण में गुरु परमानंद नाम के एक बड़े भारी विद्वान् रहते थे. वह विद्या और शास्त्र के जितने बड़े ज्ञाता थे, दुनिया के व्यावहारिक ज्ञान में उतने ही कोरे थे. उनके पांच प्रधान शिष्यों का भी यही हाल था. 'बुद्धू से बुद्धिमान' में इन्हीं गुरु-शिष्यों की मूर्खताओं की हास्यप्रद कहानियां प्रस्तुत की गई हैं.

तीनों पुस्तकों की छपाई-सफाई अच्छी है; साइज गुटका है.

● आंख और अंगुली (पृष्ठ संख्या 84); लेखक : चंद्रदत्त 'इंदु' तथा ओ.पी. गर्ग ● मनुज साहसी (पृष्ठ संख्या 67); लेखक : मनमोहन 'सरल'; मूल्य प्रत्येक का : तीन रुपये पचास पैसे; प्रकाशक : नेशनल पब्लिशिंग हाउस, 23 दरियागंज, दिल्ली-6.

आखेट युग में शिकार करना आदमी की मजबूरी थी, बाद के जमाने में यह शौक में बदल गई. लेकिन दोनों सूरतों में निशानेबाजी का महत्त्व कम नहीं हुआ. निशानेबाजी का अभ्यास करने में आंख और अंगुली दोनों को साधना पड़ता है. पहली पुस्तक 'आंख और अंगुली' इसी साधना के इतिहास का ब्योरा प्रस्तुत करती है, उसकी उपयोगिता और महत्व पर प्रकाश डालती है, उसकी तकनीकी बारीकियों से परिचित कराती है, साथ ही विश्वविख्यात निशानेबाजों का परिचय भी देती है. निशानेबाजी के शौकीन किशोरों के लिए यह पुस्तक वाकई में उपयोगी है.

मनुष्य की जिज्ञासा उसे कुछ करने को उकसाती है, साहस उसे आगे बढ़ाता है. नए-नए प्रदेश खोजने-देखने की जिज्ञासा उसके मन में सदा से रही है. इसी कारण मनुष्य ने पृथ्वी तल पर ही नहीं, आकाश और पाताल तक में पहुंचने की कोशिश की है. 'मनुज साहसी' पुस्तक में लेखक ने ऐसे ही नौ विश्वविख्यात साहसी यात्रियों का सचित्र परिचय दिया है. उनके नाम हैं—मार्कोपोलो, कोलम्बस, वास्कोडिगामा, मेजीलन, फ्रांसिस ड्रेक, डेविड लिविंग्स्टन, नान्सन, राबर्ट ई पेरी, राबर्ट स्काट. साथ में एवरेस्ट विजय पर भी एक अध्याय में विश्व के इस सर्वोच्च पर्वत-शिखर पर चढ़ाई के अब तक के इतिहास का एक लेखाजोखा प्रस्तुत किया गया है.

दोनों पुस्तकों की छपाई-सफाई अच्छी है. पहली पुस्तक सजिल्द है.

● समय का फेर (पृष्ठ संख्या 106); लेखक : जोहान्न पीटर हेबल; मूल्य : तीन रुपये; प्रकाशक : मैना प्रेस, निकल रोड, बंबई-1.

जोहान्न पीटर हेबल की गणना जर्मनी के विख्यात और लोकप्रिय कथाकारों में होती है. उनका जन्म सन् 1760 में हुआ और देहांत सन् 1826 में. योरुप में उन दिनों नैपोलियन की तूती बोलती थी. तब वहां के लोग राजनैतिक और राष्ट्रीय भावनाओं के आवेग में पागल थे. किंतु हेबल का विश्वास था कि संसार एक है और आदमी को इंसान बनाया जा सकता है. उनके हृदय की करुणा, मैत्री और शांति उनकी कहानियों में छलकती है.

'समय का फेर' में उन्हीं की 26 छोटी-छोटी रोचक कहानियों का अनुवाद दिया गया है. हर कहानी के साथ रेखाचित्र भी दिए गए हैं.

● सुनहरा (पृष्ठ संख्या 60) ● फूल और सपना (पृष्ठ संख्या 70); दोनों पुस्तकों की लेखिका : शशिप्रभा शास्त्री; मूल्य प्रत्येक का : दो रुपये पचास पैसे ● बोलने वाली रजाई (पृष्ठ संख्या 48); लेखक : श्रीकृष्ण; मूल्य : दो रुपये; प्रकाशक : विद्या मंदिर लिमिटेड, 12/90 कनाट सरकस, नई दिल्ली-1.

सुनहरा एक अनाथ और दरिद्र लड़का था. बाप के मरने के बाद उसे अपनी मां के साथ चाचा के आश्रय में रहना पड़ा. एक नए स्कूल में आठवीं में दाखिल हुआ, तो वहां उसका परिचय सतीश नाम के लड़के से हुआ. परिचय धीरे-धीरे मित्रता में बदल गया. लेकिन यह मित्र अमीर का बेटा था. इससे सुनहरा में हीनताभास पैदा हुआ और धीरे-धीरे वह उस धनाढ्य मित्र के सद्व्यवहार की अवहेलना कर द्वेष, ईर्ष्या, डाह आदि दुर्गुणों का शिकार होकर चोरी, बेईमानी जैसी हरकतें करने लगा. लेकिन अंत में अपने मित्र के पूर्ण विश्वास तथा सहानुभूति से वह फिर सद्मार्ग पर आ जाता है और अपने 'सुनहरा' नाम को सार्थक करता है. 'सुनहरा' उपन्यास के कथानक का ताना-बाना इन्हीं उपकरणों से तैयार किया गया है. लेखिका ने सुनहरा के चरित्र का अच्छा मनोवैज्ञानिक अध्ययन प्रस्तुत किया है. उपन्यास रोचक है. जगह-जगह रंगीन चित्र भी दिए गए हैं.

'फूल और सपना' में लेखिका की 11 कहानियों का संकलन है. इनमें से कई कहानियां 'पराग' में छपकर पहले ही लोकप्रिय हो चुकी हैं. इन कहानियों की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि ये सब आज के बच्चों के बारे में हैं. आज की सामाजिक, आर्थिक और पारिवारिक परिस्थितियों में बच्चे क्या सोचते-समझते और महसूस करते हैं, उनकी अपनी समस्याएं क्या हैं, उनके चरित्र-विकास में बदलते सामाजिक मूल्यों की क्या भूमिका है, लेखिका ने इन सब बातों को नजर में रखकर इन्हें लिखा है. सभी कहानियां रोचक और सचित्र हैं.

'बोलने वाली रजाई' में श्रीकृष्ण की छह बाल कहानियों का संग्रह है. कहानियों के शीर्षक हैं—मूर्खों की कमी नहीं, डाह का फल, आधा मुर्गा, पांच भाई—पांच करामात, जिद्दी एकी, बोलने वाली रजाई. कहानियों के विषय उनके शीर्षकों से स्पष्ट हैं. सभी कहानियां सचित्र हैं.

तीनों पुस्तकों की छपाई-सफाई सुंदर है.

—लक्ष्मीचंद्र गुप्त

kissekahani.com

पापा को समझाओ सप्ताह

kissekahani.com

दुर्घटना!...बस हो गई. पलक झपककर खुली कि हो गई. रोहतगी अंकल पिछले दो महीनों में दो बार दुर्घटना के शिकार बने. वह तो पूर्वजन्म के कुछ पुण्य काम आ गए अन्यथा 'राम नाम सत्य है' होने में कोई कसर शेष नहीं रही थी.

संयोग ऐसा हुआ कि दोनों बार दुर्घटना-स्थल पर अशोक उपस्थित था. दुर्घटना की जांच के लिए यदि कोई कमीशन नियुक्त किया जाता, तो अशोक उसका सदस्य अवश्य होता. यदि ऐसा होता तो वह अपने विचार निष्पक्ष भाव से नगर की जनता के समक्ष रखता. भले ही उससे रोहतगी अंकल की मानहानि हो जाती, रोहतगी आंटी का मुंह गोलगप्पे-सा फूल जाता. किसी के रुष्ट होने के भय से कमीशन तथ्यों पर परदा कैसे डाल सकता है? चूंकि कमीशन का गठन नहीं किया गया, इसलिए अशोक ने स्पष्ट रूप से अपने विचार व्यक्त नहीं किए. हां, छिट-पुट रूप से उसने अपनी बात अवश्य कही. अच्छा हुआ कि उसके विचार उसकी मित्रमंडली तक सीमित रहे. उसके विचार यदि पापा तक पहुंच जाते तो उसकी कान-खिचाई निश्चित थी.

अशोक का कथन था कि पहली दुर्घटना के समय मेहरोत्रा आंटी उधर से निकल रही थीं और रोहतगी अंकल सामने देखने के स्थान पर मेहरोत्रा आंटी को देख रहे थे. ऐसे में स्कूटर का सड़क से बहुत बचकर खड़ी एक सीमेंट की पुलिया पर चढ़ जाना स्वाभाविक था. पुलिया की दो-चार ईंटें उखड़ गईं, स्कूटर घर्र-घर्र कराहने लगा और रोहतगी अंकल की एक हड्डी टूट गई, शरीर पर यत्र-तत्र जो खरोंचें लगीं उनका तो कोई हिसाब ही नहीं.

दूसरी दुर्घटना भी लगभग ऐसी ही परिस्थितियों में हुई. सहगल आंटी कार ड्राइव कर रही थीं कि रोहतगी अंकल का स्कूटर अपना पथ छोड़कर कार की ओर आकर्षित हो गया. इस बार की दुर्घटना भयंकर रही. रोहतगी अंकल की गले के नीचे की हड्डी टूट गई. स्कूटर के अंजर-पंजर ढीले हो गए, और रक्त से लथपथ रोहतगी अंकल अस्पताल पहुंच गए.

अशोक की बात से उसके अनेक मित्र सहमत थे. मेहरोत्रा आंटी में कुछ विशेष ही बात है, वह उन्हें भी अच्छी लगती है और उनके पापाओं को भी!

"मैंने पहले भी दो-तीन बार रोहतगी अंकल को मेहरोत्रा आंटी को देखते देखा है. न जाने वह क्या देखते हैं?" राजीव ने प्रश्नसूचक स्वर में कहा.

"क्या देखते हैं, यह तो राम जाने या रोहतगी अंकल जानें. दुर्घटना के समय वह मेहरोत्रा आंटी को देख अवश्य रहे होंगे अन्यथा सड़क छोड़कर स्कूटर एक किनारे पर स्थित पुलिया पर कैसे चढ़ जाता? अशोक ठीक ही कह रहा लगता है." सुमीत ने भी अशोक का समर्थन किया.

"पराई स्त्री देखने का पाप लगा है रोहतगी अंकल को!" शरद ने गंभीर स्वर में कहा.

दूसरी दुर्घटना को अभी दो-तीन दिन ही हुए थे. सेक्टर के सब पापा लोग रोहतगी अंकल को देखने जा रहे थे. अपने पापा के साथ अशोक भी रोहतगी अंकल को देखने अस्पताल

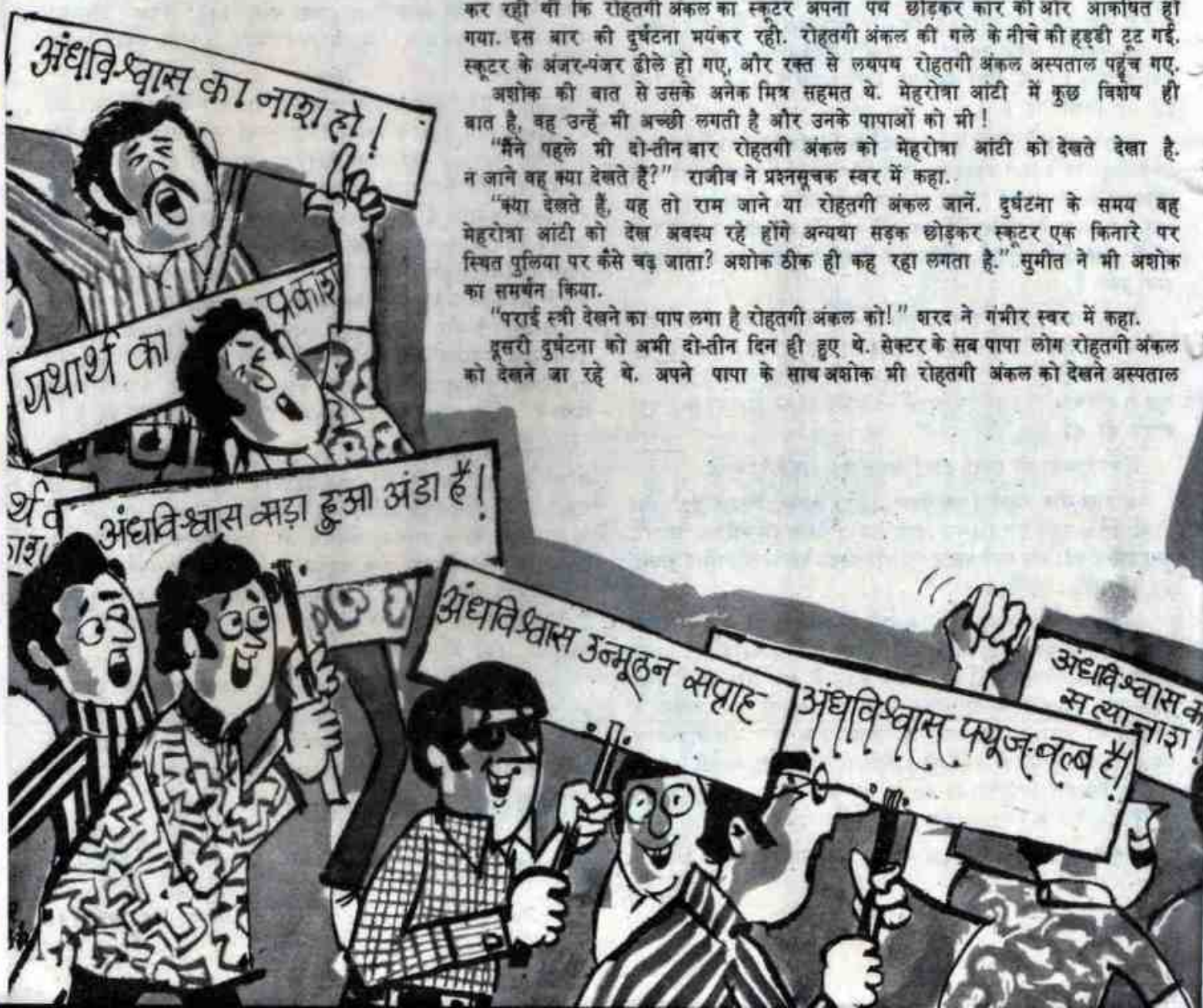

kissekahani.com

गया. रोहतगी अंकल भोलेभाले-से एक बेड पर पड़े थे. उनके शरीर पर जहां-तहां पट्टियां बंधी थीं. उनका चेहरा बुझा हुआ था. रुक-रुककर वह कराह उठते थे और रोहतगी आंटी की आंखें छलछला आती थीं.

"बस, भाई, बच ही गया. तुम लोगों के साथ और कुछ दिन रहना था. शायद पिछले जन्म के कुछ पुण्य शेष थे अन्यथा मरने में कोई कसर नहीं रह गई थी." रोहतगी अंकल ने दुःख से बोझिल स्वर में अशोक के पापा से कहा.

अशोक के पापा का स्वर दुःख से आर्द्र हो उठा—"सब ऊपर वाले की माया है. . . . ."

"अपने दिन ही बुरे आ गए हैं, भाई साहब! दो महीनों में दो-दो दुर्घटनाएं हो गईं. और सब भी स्कूटर चलाते हैं किंतु ऐसा किसी के साथ नहीं होता!" रोहतगी आंटी ने करुण स्वर में कहा. उनकी आंखें आंसुओं से नम थीं.

"जीवन में सुख-दुःख तो लगे ही रहते हैं. आप तो व्यर्थ मन छोटा कर रही हैं, भाभी. रोहतगी भाई कुछ ही दिनों में स्कूटर दौड़ाते दिखाई देंगे, हां!" अशोक के पापा ने कहा.

"फिर यह स्कूटर?" सिन्हा आंटी ने आंखें चौड़ी करते हुए कहा—"यह स्कूटर तो मनहूस है मनहूस. यह स्कूटर भाई साहब के लिए अशुभ है. देखा नहीं, मुए ने दो माह में भाई साहब को दो बार अस्पताल पहुंचा दिया. और दोनों बार दुर्घटनाएं ऐसे स्थान पर हुईं, जहां एकदम भीड़ नहीं थी, दुर्घटना की एकदम संभावना नहीं थी. मेरी मानिए, भाई साहब, तो इस स्कूटर की छुट्टी कर दीजिए. जान है तो जहान है. ऐसे स्कूटर से तो पैदल जाना भला."

सिन्हा आंटी की बात पर अशोक को मन ही मन हंसी आ रही थी. जबसे रोहतगी अंकल का स्कूटर आया है, सिन्हा आंटी उदास हैं, ईर्ष्या की अंगीठी में कोयले-सी चट्-चट् जल रही हैं. इसी से शायद रोहतगी अंकल के स्कूटर की छुट्टी करा देना चाहती हैं. उनका बस चले तो सारे सेक्टर में बिना स्कूटर का समाजवाद स्थापित कर दें. किंतु पापा के भय से अशोक ने कुछ कहा नहीं. बड़ों के इस सम्मेलन में, इस मंच पर कुछ कहने के लिए वह बहुत छोटा था.

रोहतगी अंकल की आंखों में पीड़ा उभर आई. वह उदास से और उदास हो गए.

"शुभ-अशुभ में मुझे अधिक विश्वास नहीं. किंतु जब ऐसी दुर्घटनाएं देखता हूं, तो मेरा विश्वास डोल जाता है. दो महीनों में दो गंभीर दुर्घटनाएं हो जाना मात्र संयोग नहीं," विश्वास अंकल ने कहा.

"यह स्कूटर इन पर भारी है. पहली दुर्घटना के समय भी किसी ने मुझे यही बात कही थी. मुझे विश्वास नहीं हुआ, फिर भी मैंने कीर्तन करा दिया. किंतु कीर्तन भी अगली दुर्घटना को नहीं रोक पाया. अभी तो स्कूटर का आरंभ है, देखिए आगे-आगे क्या होता है! जब मैं यह सब सोचती हूं तो कलेजा दहल जाता है. आग लगे ऐसे स्कूटर को. आप ठीक होते ही पहले इस स्कूटर को विदा कीजिए!" रोहतगी आंटी ने भर्राए कंठ से कहा.

kissekahani.com

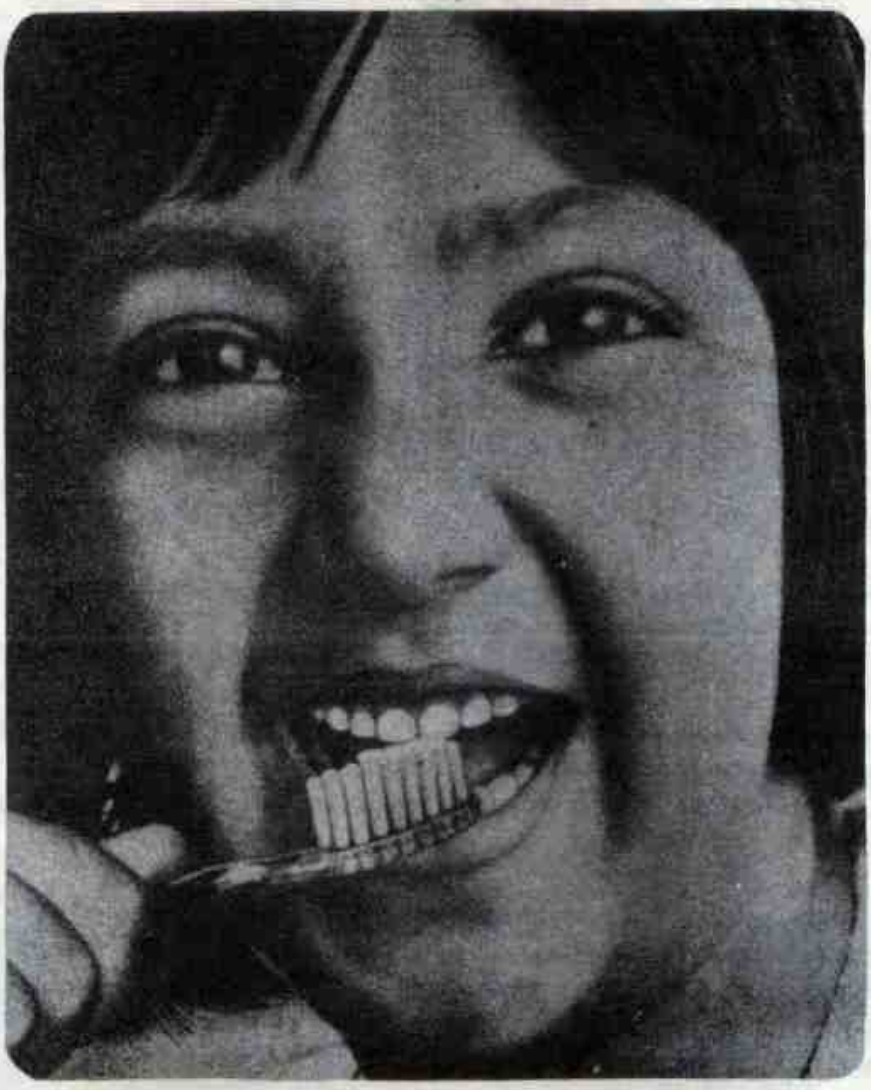

कोलगेट डेन्टल क्रीम से सांस की दुर्गंध रोकिये... दंतक्षय का दिन भर प्रतिकार कीजिये!

वैज्ञानिक परीक्षणों से यह सिद्ध हो चुका है कि १० में से ७ लोगों के लिए कोलगेट सांस की दुर्गंध को तत्काल खत्म कर देता है और कोलगेट विधि से खाना खाने के तुरंत बाद दांत साफ़ करने पर अब पहले से अधिक लोगों का— अधिक दंतक्षय रुक जाता है। दंत-मंजन के सारे इतिहास की यह एक बेमिसाल घटना है। क्योंकि एक ही बार दांत साफ़ करने पर कोलगेट डेन्टल क्रीम मुंह में दुर्गंध और दंतक्षय पैदा करने वाले ८५ प्रतिशत तक रोगाणुओं को दूर कर देता है। केवल कोलगेट के पास यह प्रमाण है। इसका पिपरमिंट जैसा स्वाद भी कितना अच्छा है— इसलिए बच्चे भी नियमित रूप से कोलगेट डेन्टल क्रीम से दांत साफ़ करना पसंद करते हैं।

ज्यादा साफ़ व तरोताज़ा सांस और ज्यादा सफ़ेद दांतों के लिए...

दुनिया में अधिक लोग दूसरे टूथपेस्टों के बजाय कोलगेट ही खरीदते हैं!

kissekahani.com

"जब संदेह हो जाए, तो उस संदेह से मुक्ति पा लेना ही उचित है. संदेह व्यक्ति के आत्म-विश्वास का शत्रु है." विश्वास अंकल ने कहा.

अगले दिन अशोक ने रोहतगी अंकल के लड़के समीर को बहुत उदास पाया.

"पापा स्कूटर बेचने की सोच रहे हैं," उसने अशोक से कहा.

"कल मैं अस्पताल गया था. वहां स्कूटर के अशुभ होने की चर्चा चल रही थी," अशोक ने कहा. "यह अशुभ का चक्कर अपनी खोपड़ी में नहीं घुसता. साइकिल सीखते समय मैंने चार टक्करें मारीं किंतु साइकिल के अशुभ होने का विचार कभी मेरे मन में नहीं आया. दो वर्ष से उसकी सवारी गांठ रहा हूं, किंतु क्या मजाल कि कोई दुर्घटना हो जाए."

समीर ने कहा—"इस दुर्घटना से मम्मी बहुत चिंतित हैं. मम्मी न जाने क्या-क्या सोचती रहती हैं? कहां पापा इस रविवार को मुझे और मम्मी को जमशेदपुर ले जाने वाले थे, कहां मैं सोच रहा था कि पापा का स्कूटर चलाना सीखूंगा! मैंने अपने से छोटे दो-तीन लड़कों को स्कूटर चलाते देखा है."

"तुम मम्मी से यह सब कहते क्यों नहीं?" अशोक ने पूछा.

"कह तो बहुत रहा हूं किंतु कोई परिणाम नहीं निकल रहा. मम्मी अपनी बात पर अड़ी हुई हैं. लगता है अब यह स्कूटर जाएगा ही. अपने भाग्य में स्कूटर-सुख नहीं, इस आयु में स्कूटर सीखना भी नहीं लिखा!" समीर ने डूबते स्वर में कहा.

हालांकि अशोक का स्कूटर से कोई संबंध नहीं था, किंतु एक उदासी, एक निराशा उसे घेर रही थी. स्कूटर के बिकने की बात, सिन्हा आंटी के सुझाव को मान्यता मिलने की बात उसे अच्छी नहीं लग रही थी. समीर का दुःख जैसे उसके शरीर में घुल रहा था.

"यार, अपनी यह आयु बहुत बुरी है; न हाथ में कुछ पैसा रहता है, न अपनी बात कोई सुनता है. काश, मैं यह स्कूटर खरीद सकता! फिर हम दोनों स्कूटर पर चढ़कर स्कूल जाते, पास के गांव के अमरूदों के बाग में जाते, लोगों को बताते कि अशुभ स्कूटर कितना शुभ होता है!" अशोक ने कहा. कहने के साथ ही वह बुझ गया. उसकी यह कल्पना सत्य होने वाली नहीं थी.

"काश, यह स्कूटर मेरे पापा के पास ही रहता!" समीर ने बुझे स्वर में कहा. वह अपनी और अशोक की सीमा जानता था.

किंतु अशोक सरलता से हार मानने वाला प्राणी नहीं था. भला यह क्या बात हुई कि बात काबू से बाहर जाती जान पड़ी और समर्पण कर दिया, घुटने टेक दिए!

"भाई, हार मान लेना अपना स्वभाव नहीं, वह भी तब जबकि अपना पक्ष उचित हो; तर्क-सम्मत हो," अशोक ने सिर खुजलाते हुए कहा.

"उपाय ही क्या है?" समीर पूर्ववत् निराश था.

"चांद पर जाने का उपाय है, यह तो बात ही क्या है! सोचो, सोचो. सोचने से ही कुछ सूझेगा. बिना सोचे उपाय घास की भांति तो मस्तिष्क में उग नहीं आएगा," अशोक ने कहा.

उसे अब एक ही धुन थी, उपाय सोचने की धुन, स्कूटर न बिकने देने की धुन. उठते-बैठते, सोते-जागते, नहाते-खाते वह उपाय ही सोचता; समीर से, अन्य मित्रों से इस विषय पर चर्चा करता.

●

समीर के पापा घर आ गए थे. उनके शरीर पर अभी भी पट्टियां बंधी थीं. वह घर में ही थोड़ा-बहुत चल-फिर लेते थे.

एक शाम अशोक ने उनके नाम एक पत्र लिखा—

आदरणीय,

आपको कोई सुझाव देना मेरे लिए सूरज को दीपक दिखाने के समान है. किंतु आपकी दोनों दुर्घटनाओं का दर्शक होने के नाते मुझे आपसे कुछ कहना है. आशा है आप मेरे निवेदन पर ध्यान देंगे और मुझे गलत नहीं समझेंगे—

स्कूटर चलाते समय रहें सावधान;
आंटियों में कभी नहीं अटकाएं अपना ध्यान!

मैंने कहीं पढ़ा है—'जब मन रमा सपनों में, तन फंसा खतरों में!' शायद यह सच है. इसी कारण मुझसे कुछ दुर्घटनाएं हुई हैं. जबसे यह मंत्र मेरे हाथ लगा है मैं दुर्घटनाओं से बचा हुआ हूं. आशा है आप भी इस मंत्र के महत्त्व को स्वीकार करेंगे. मुझे विश्वास है, भविष्य में आपसे कोई दुर्घटना नहीं होगी. और शीघ्र ही आपकी गणना नगर के कुशल स्कूटर चालकों में होने लगेगी.

आपका एक शुभचिंतक

पत्र को अशोक ने लिफ़ाफ़े में डालकर तुरंत पोस्ट कर दिया. इस विषय में उसने समीर को कुछ नहीं बताया. और अगले दिन से वह समीर के पापा की मुख-मुद्रा पढ़ने की चेष्टा करने लगा. वह अपने पत्र की प्रतिक्रिया जानना चाहता था. एक-दो बार वह उनकी कुशल-क्षेम पूछने भी गया. किंतु उनकी मुखमुद्रा में मनोनुकूल परिवर्तन देख सकने में असमर्थ रहा.

उसे लगा कि उसका प्रथम प्रयास सफल नहीं रहा.

'अब अगला कदम उठाना ही है. उससे ही काम बनेगा,' उसने मन ही मन कहा और अपने मित्रों से मिलने चल पड़ा.

चार-पांच दिनों पश्चात् समीर के घर की दीवार पर, सेक्टर के अन्य मकानों की दीवारों पर बड़े-बड़े अक्षरों में लिखा था—'अंध-विश्वास का नाश हो! यथार्थ का प्रकाश हो!'

सेक्टर की सड़कों पर एक जलूस घूमता हुआ भी लोगों को दिखाई पड़ा. जलूस में सेक्टर के लगभग तीस लड़के थे. सभी के हाथों में एक-एक तख्ती थी जिस पर कोई न कोई नारा अंकित था. 'अंध-विश्वास! तेरा सत्यानाश!' 'अंध-विश्वास की टांय-टांय फिस्स!' 'अंध-विश्वास की दाल नहीं गलेगी!' 'अंध-विश्वास की एक नहीं चलेगी!' 'अंध-विश्वास फ्यूज बल्ब है!' 'अंध-विश्वास एक सड़ा हुआ अंडा है!'

सब लड़के हाथ उठाकर ऊंचे स्वर में नारे लगा रहे थे. 'अंध-विश्वास का नाश हो! यथार्थ का प्रकाश हो!' 'अंध-विश्वास की खुल गई पोल! करो उसका बिस्तर गोल!' 'अंध-विश्वास के कंकड़ों की खिचड़ी! आक्-थू! आक्-थू!' 'अंध-विश्वास उन्मूलन सप्ताह! वाह-वाह! वाह-वाह!'

यह जलूस तीन दिन तक निकलता रहा. समीर के घर के आगे से निकलते समय जलूस के सदस्यों का उत्साह बढ़ जाता. उनके चेहरों पर ताजगी आ जाती. उनके कंठ से निकलता स्वर पंचम से सप्तम हो जाता. तीनों दिन सेक्टर के मैदान में, जो समीर के घर से स्पष्ट दिखाई पड़ता था, अंध-विश्वास के पुतले जलाए गए—अंधविश्वास के काले घिनौने पुतले!

●

चौथे दिन अशोक अपने तीन साथियों को लेकर समीर के घर गया. समीर के पापा बरामदे में ही टहल रहे थे. उन सबकी कमीजों पर अंध-विश्वास विरोधी नारे टंके थे. अशोक और उसके मित्रों ने समीर के पापा को प्रणाम किया.

"कैसे आए, अशोक?" समीर के पापा ने किंचित आश्चर्य से पूछा. यों अशोक समीर के घर प्रायः आता-जाता रहता था किंतु आज वह भिन्न रूप में गया था.

"अंकल, आप तो जानते ही होंगे कि हम लोग अंध-विश्वास विरोधी सप्ताह मना रहे हैं," अशोक ने कहा.

"जानता तो नहीं, किंतु अनुमान अवश्य लगा सकता हूं. सेक्टर में जहां-तहां अंध-विश्वास विरोधी नारे लिखे दिखाई दे रहे हैं, अंध-विश्वास विरोधी नारे हवा में तैर रहे हैं. तुम लोगों का मस्तिष्क बहुत उर्वर है!"

(शेष पृष्ठ 51 पर)

kissekahani.com

लेख

देश-विदेश के अनोखे त्योहार

— श्रीकृष्ण

नए वर्ष के उल्लास में डूबे त्योहार

आम धारणा है कि नया वर्ष अपने साथ सुख, सौभाग्य और सम्पन्नता का शुभ संदेश लेकर आता है, यही कारण है कि विश्व के विभिन्न देशों में नए वर्ष के स्वागत में तरह-तरह के रोचक और अनोखे त्योहार मनाए जाते हैं.

अंग्रेजी काल-गणना के अनुसार अधिकांश देशों में पहली जनवरी से ही नया वर्षारंभ होता है, पर कुछ देशों में वर्ष के बीच-बीच में नए वर्षारंभ का उत्सव मनाया जाता है.

इंग्लैंड, उत्तर इंग्लैंड और आयरलैंड आदि देशों में नए वर्ष का उत्सव बड़े ठाट-बाट से मनाया जाता है. उस दिन गांवों में ढूंढ़-ढूंढ़कर काले बालों वाले व्यक्तियों को एकत्रित किया जाता है. ये व्यक्ति वहां सुख-सम्पत्ति के दूत माने जाते हैं. ये दूत 31 दिसंबर की रात्रि को बारह बजे घर-घर में घूमकर कुछ खास-खास वस्तुएं भेंट करते हैं. ब्रिटेन में इस रात में सभी गिरजा-घरों के घंटे जोर-जोर से बजने लगते हैं, तोपें दागी जाती हैं और बंदरगाहों में लंगर पड़े जहाजों के भोंपू एक साथ बजने लगते हैं.

अमेरिका के न्यूयार्क में नया वर्ष लगने पर जितना अधिक शोरगुल किया जा सके, उतना ही शुभ और आनंदसूचक माना जाता है. वहां 31 दिसंबर की रात को बारह बजे सभी गाड़ियों के घंटे बजने लगते हैं. किन्हीं-किन्हीं जहाजों में घंटे की संख्या सोलह होती है. इनमें से आठ घंटे तो पुराने वर्ष की विदाई पर और आठ नूतन वर्ष के स्वागत में बजाए जाते हैं.

स्कॉटलैंड में तो पुराने वर्ष की अंतिम रात्रि को बारह बजे से कुछ पहले नवयुवक मक्खन, डबल रोटी, केक, टाफियां तथा चाय आदि लेकर अपने घरों से निकल पड़ते हैं और बारह का घंटा बजने के साथ ही अपने मित्रों और संबंधियों के घरों में प्रवेश करते हैं, जहां उनका बड़े हर्ष और उत्साह के साथ स्वागत किया जाता है. डबल रोटी, टाफियां और चाय आदि परिवार के सभी सदस्यों में बांट दी जाती हैं. यहां के लोगों का विश्वास है कि नए वर्ष में प्रवेश करने वाला पहला अतिथि अपने साथ सुख-समृद्धि और सौभाग्य लेकर आता है.

प्राचीन रोम में नववर्ष पर भेंट देने की प्रथा थी. रोम के एक बादशाह ने तो घोषणा की थी कि केवल नववर्ष पर ही भेंट दी जा सकती है; कोई भी व्यक्ति पहली जनवरी के अतिरिक्त अन्य किसी भी दिन कोई भेंट स्वीकार नहीं करेगा.

जापान में नए वर्ष का त्योहार कर्ज चुकाने के त्योहार के रूप में मनाया जाता है. नववर्ष के दिन प्रत्येक जापानी अपना पिछले साल का सारा कर्ज चुका देता है. जो जापानी इस दिन अपना कर्ज नहीं चुकाता, वह बेईमान समझा जाता है. इसलिए जो लोग धनाभाव के कारण कर्ज चुकाने में असमर्थ होते हैं वे घर का कुछ सामान बेचकर ऋण चुकाते हैं. इन ऋण चुकाने वालों का नए दिन से एक दिन पूर्व बड़ा भारी मेला लगता है, जहां वे अपने घर की तरह-तरह की

जरा इनकी वेशभूषा और चेहरों को देखिए —ये हैं नार्दम्बरलैंड के निवासी, जो नए वर्ष को तरह-तरह के स्वांग रचकर मनाते हैं

kissekahani.com

चीजें बेचने के लिए लाते हैं—यानी उस दिन जापानी कर्जदार कर्ज से छुटकारा पाने के लिए अपनी घरेलू चीजों की इस मेले में दूकान लगाकर बैठते हैं और इस तरह ये दूकानें मीलों लंबी होती हैं.

नववर्ष का त्योहार जापानियों के लिए सबसे खुशी का त्योहार होता है. यह कई दिनों तक मनाया जाता है. नववर्ष के प्रथम दिन सवेरे-सवेरे कुएं अथवा नदी से ताजा जल लाया जाता है जिसे 'नवजात जल' कहते हैं. विश्वास किया जाता है कि इसके सेवन से उम्र बढ़ती है. इन दिनों सर्वत्र फूलों की बहार दिखाई पड़ती है. फूलों के रथों और नौकाओं में देवताओं और परियों का जुलूस निकाला जाता है, जिसे देखने के लिए पूरा शहर ही उमड़ पड़ता है.

गली-कूचे, सड़कें और घर-द्वार चीड़ की टहनियों और हरे बांस के टुकड़ों से सजाए जाते हैं. चीड़ दीर्घजीवन और बांस सच्चरित्रता तथा दृढ़ता का प्रतीक माना जाता है.

ईरानी नया वर्ष 21 मार्च को अर्थात् 20 मार्च की मध्य रात्रि को आरंभ होता है. यह उत्सव नौरोज के नाम से प्रसिद्ध है. नौरोज की मध्य-रात्रि को घर के किसी कोने में मेज पर या नीचे कालीन पर एक नया कपड़ा बिछाया जाता है जिसे ईरानी 'सुफा' कहते हैं. इस कपड़े पर अनेक वस्तुएं करीने से रख दी जाती हैं. दर्पण, रंगे हुए अंडे, घर के प्रत्येक सदस्य के लिए एक मोमबत्ती, मछली या मछली के आकार की कोई अन्य वस्तु, कुरान पाक की पुस्तक और सात ऐसी चीजें जिनका नाम 'स' से प्रारंभ होता है, जैसे—सेब, सजन (एक फल), सीर (लहसुन), सुई, सब्जी आदि. इसके अतिरिक्त जैसे हमारे यहां दशहरे के पर्व पर नई पौध के रूप में जौ के बाल उगाए जाते हैं, इसी प्रकार ईरान में गेहूं की कोंपलें इस अवसर पर बो दी जाती हैं और छोटे-छोटे डिब्बों और टोकरियों में सजाकर उन्हें स्थान-स्थान पर सजावट के लिए रख दिया जाता है. गेहूं की ये कोंपलें और पौध नए स्वस्थ जीवन की प्रतीक मानी जाती हैं.

सब सदस्य नए वस्त्र पहनकर सुफा के चारों ओर खड़े हो जाते हैं, मोमबत्तियां जला दी जाती हैं. ऐसे अवसर पर कोई नहीं चाहता कि उसके नाम की मोमबत्ती बुझ जाए, इसलिए हवा रोकने के लिए दरवाजा बंद कर देते हैं, क्योंकि ज्योति का बुझना अशुभ माना जाता है.

चीन में नया वर्ष वसंतोत्सव के रूप में मनाया जाता है. चीनी लोग यह मानते हैं कि प्रत्येक परिवार में रसोईघर का एक देवता होता है, जो घर के सभी सदस्यों के अच्छे-बुरे कामों का लेखा-जोखा रखता है. वर्ष में एक बार यह देवता अपनी रिपोर्ट दुनिया के मालिक को देने जाता है.

नव वर्षोत्सव से सात दिन पहले पटाखे और आतिशबाजी छोड़ कर देवता को विदाई दी जाती है.

समझा जाता है कि रिपोर्ट देकर वह देवता नए वर्ष के दिन वापस लौटता है. उस दिन सुबह के नाश्ते में चावलों से बनाई गई मिठाई परोसी जाती है. किसी एक मिठाई में छिपाकर एक सिक्का रख दिया जाता है. परिवार के सब लोग एक साथ नाश्ता करने बैठते हैं. जिसकी मिठाई में यह सिक्का निकल आए उसके लिए नया वर्ष शुभ और सौभाग्य देने वाला माना जाता है.

बाली द्वीप में नववर्ष-दिवस 'गालुंगन' कहलाता है. गालुंगन के पहले पांच-सात दिन यहां चोरी का बाजार खूब गरम रहता है. बात यह है कि इस दिन सबको अपने मित्रों और संबंधियों को उपहार देने पड़ते हैं.

गालुंगन के दिन बाली द्वीप के निवासी अपने बंधु-बांधवों से मिलने के लिए उनके गांवों में जाते हैं. पांच-छह दिन तक कोई काम-धाम नहीं करता. दूकानों के दरवाजे नहीं खुलते. इसलिए कई दिन तक इस द्वीप के मुख्य बाजारों में न फल मिलते हैं, न अंडे और न तरकारी. इन दिनों होटल के नौकर अपने कानों में फूल लगाए, बढ़िया कपड़े पहने, आंगन में बैठकर बरतन मांजने का बहाना करते रहते हैं. 'गालुंगन' के अवसर पर होटलों में सुंदर-सुंदर युवतियां आती हैं और उन्हें रिझाने की कोशिश करती हैं. लड़का विवाहित हो तो भी कोई हर्ज नहीं, दो विवाह

जापान में नया वर्ष महोत्सव के रूप में मनाया जाता है. उस दिन जापानी महिलाएं अपने-अपने घरों को बड़े कलात्मक ढंग से सजाती हैं

हो सकते हैं. ऐसी दशा में पहली पत्नी बेशक कुछ दिन शोर मचाती है, पर अंत में हारकर चुप हो बैठ जाती है.

तिब्बत में नए वर्ष का उत्सव साल के सबसे बड़े त्योहार के रूप में मनाया जाता है. नया वर्ष हंसी-खुशी बीते और पिछले वर्ष जो बुराइयां समाज में घर कर गई हैं उनके बुरे असर को दूर करने के लिए, नए वर्ष के आगमन से कुछ घंटे पूर्व एक नृत्य-समारोह का आयोजन किया जाता है. समारोह का पहला नृत्य युद्ध-नृत्य होता है. यह नृत्य सैनिकों द्वारा होता है जो पुराने कवचों के टुकड़े पहने होते हैं और सिर पर पक्षियों के पंखों से सजी हुई टोपियां ओढ़े होते हैं. हाथों में बेंत की ढाल होती है. जब सब सैनिक एक साथ अपनी-अपनी बंदूक छोड़ते हैं और चारों ओर गोलियों की धायं-धायं सुनाई पड़ती है, तो वातावरण बहुत डरावना और रोमांचपूर्ण हो जाता है. आकाश धुएं से भर जाता है और बच्चे डर से कांपने लगते हैं. अंत में युद्ध के बाजे बजने के साथ यह नृत्य समाप्त हो जाता है.

युद्ध-नृत्य के बाद दानव-नृत्य होता है. इस नृत्य में लामा (साधु) भाग लेते हैं, जो अपने मुखों पर तरह-तरह के डरावने और भीमकाय मुखौटे पहने होते हैं. दानवों की तरह इनके भी बड़े-बड़े दांत बाहर निकले रहते हैं. बहुत देर तक उछल-कूद मचाने और इधर-उधर मटकने के

(शेष पृष्ठ 57 पर)

kissekahani.com

किशोरों का लोकप्रिय नायक :

राजेश खन्ना

'पराग' के लिए एक विशेष भेंट-वार्ता

आजकल स्कूल या कॉलिज में अगर कोई लड़का फैशनेबल पोशाक में पहुंच जाए तो दोस्त लोग—'वाह क्या जंच रहे हो, आज तो बड़े हैंडसम लग रहे हो' की बजाय सीधे-सीधे उसे 'राजेश खन्ना' कहकर काम चला लेते हैं. और स्कूल-कॉलिज की लड़कियां अपनी किताबों और कापियों पर उन पत्रिकाओं या अखबारों के कवर चढ़ाती हैं जिनमें राजेश खन्ना की तस्वीर हो. क्यों सच है न यह बात?

और अब चलिए उस स्टूडियो में जहां राजेश खन्ना की शूटिंग हो रही है. फाटक के बाहर कितनी जबरदस्त भीड़ है! लड़के कम हैं, मगर लड़कियों की भरमार है. मुड़ी मूंछों वाला गुरखा डंडा घुमाता हुआ कह रहा है, "नहीं, बाबा, तुम दस भी रुपया देगा तो भी भीतर नहीं जाने देगा . . ."

"हम तुम्हें बीस रुपये देंगे . . . बस पांच मिनिट शूटिंग देखकर वापस आ जाएंगे . . . वाचमैन अंकल, प्लीज . . . बस राजेश खन्ना को देखना है . . . !"

वाचमैन मूंछों के कोनों को उमेठता है. इतने बड़े घर की फैशनेबल लड़कियां उससे अंकल का रिश्ता जोड़ रही हैं! बेचारे का बस चलता तो दोनों फाटक खोल देता. मगर इसका नतीजा थोड़ी देर बाद यही निकलेगा ना कि राजेश खन्ना के दीवाने स्टूडियो के भीतर और वाचमैन अंकल फाटक से बाहर . . . ना बाबा ना, कोई अंदर नहीं जा सकता.

लड़कियों का दल निराशा में डूब जाता है. फिर तभी आशा की एक किरण हरेक की आंखों में जगमगाती है कि चलो शूटिंग खत्म होने पर तो वह बाहर निकलेंगे ही . . . और उसकी केवल एक झलक पाने के लिए घंटों चिलचिलाती धूप में कितनी ही सुकुमार कन्याएं कलियों-सी कुम्हलाती देखी जा सकती हैं . . .

अंदर दो आधुनिक ढंग के सजे-सजाए कमरों का सेट लगा हुआ था. सेट के सामने खाली जगह पर तिल धरने को भी जगह नहीं थी. राजेश जी लिये जाने वाले शॉट की रिहर्सल कर रहे थे और उनपर दर्जनों आंखें लगी हुई थीं. उन आंखों में ऐसा श्रद्धापूर्ण गद्‌गद् भाव था जैसे भक्त को साक्षात् भगवान के दर्शन हो रहे हों! उन छोटे-बड़े भक्तों के हाथों में ऑटोग्राफ बुक्स फड़फड़ा रही थीं.

"ओह, एक और नई मुसीबत खड़ी हो गई," डायरेक्टर शक्ति सामंत बोले, "लड़कियां तो थी हीं राजेश की दीवानी, अब बच्चे भी हो गए . . . क्या मुसीबत है!"

"यह सब 'हाथी मेरे साथी' का कमाल है . . ." किसी ने कहा.

"चलो ये लोग भाग्यशाली हैं, किसी-न-किसी की सिफारिश लेकर अंदर आ गए, मगर जो बाहर खड़े हैं उनके बारे में आपका क्या खयाल है?"

राजेश के मुस्कराते चेहरे पर तनिक गंभीरता आ गई, बोले, "मैं अपने चाहने वालों की बड़ी कद्र करता हूं. वे बेचारे इतने भोले हैं कि नहीं जानते शूटिंग तमाशा नहीं है, स्टूडियो पिकनिक स्पॉट नहीं है . . . अगर उन्हें अंदर आने दिया जाए तो सारी शूटिंग चौपट हो जाएगी . . . सच, कभी-कभी तो मुझे बड़ी तकलीफ होती है. खैर, मेरे लिए तो काम से बढ़कर दूसरी कोई चीज नहीं . . . यह मेरा धर्म है, यही मेरी पूजा है . . ."

अचानक स्टूडियो के घरघराते पंखे बंद हो गए. 'लाइटस ऑन' की जोरदार आवाज के साथ ही बड़े-बड़े आर्कलैंप जल उठे. आंखों को चुंधिया देने वाली रोशनी में राजेश खड़े थे. उनपर आधे मिनिट का शॉट लिया जाना था. पंद्रह मिनिट में शॉट खत्म हुआ. दूसरा शॉट दूसरे कमरे में लिया जाना था. अतः बीच में करीब आधे घंटे का गैप था. राजेश ने आगे बढ़ना चाहा, तो लड़कियों और बच्चों का दल ऑटोग्राफ बुक्स लेकर उनपर टूट पड़ा. वे मुस्करा-मुस्करा कर हस्ताक्षर करते गए. इसी दौरान मैंने फिर पकड़ा और कहा, "ध्यान रखिए, आपको 'पराग' के पाठकों के सामने भी खड़े होना है, और उन्हें कई ऐसी बातें बतानी हैं, जिनसे वे आपकी फ़िल्मी और गैरफिल्मी जिंदगी के बारे में जानकारी पा सकें."

"जरूर," वह बोले, "मैं तैयार हूं."

वह सोफे पर बैठ गए. दूसरे शॉट में शर्मिला टैगोर को भी काम करना था, अतः वह भी सैट पर आ गईं. उनकी पीली साड़ी की चमक और ताजे मेकअप की दमक देखकर लगा जैसे एक आर्कलैंप और जल उठा हो. चुपचाप वह सामने वाली चेयर पर बैठ गईं. अपने गालों के गड्ढों को और गहरा करते हुए उन्होंने राजेश की तरफ देखा जो अपने भीतर वही सनसनाहट महसूस कर रहे थे, जैसी हर व्यक्ति तब महसूस करता है जब वह यौवन की सीढ़ी पर पहला पग रखता है. ऐसी सनसनी राजेश जी को उस समय नाटक देखने में महसूस होती थी, जब वह 'काका' कहलाते थे. उन्हीं दिनों की याद में डूबे वह बोले, "तब कहीं भी पता लगता कि कोई ड्रामा होने वाला है, फौरन वहां जा पहुंचता . . . और कभी ड्रामा देखते-देखते जब यह सोचता कि फलाने ऐक्टर की जगह अगर मैं होता तो . . . मेरा दिल धड़क उठता . . . मैं घबरा जाता. नहीं-नहीं मैं स्टेज पर ऐक्टिंग कर ही नहीं सकूंगा . . ."

उनकी बात पर वहां बैठे लोग खिलखिला उठे. स्वयं राजेश भी जोर से हंस पड़े. तभी किशोर-किशोरियों का दल-का-दल चला आया. कुछ ने शर्मिला को घेरा, कुछ ने राजेश को. दोनों दस्तखत करते गए. साथ ही राजेश ने बात आगे बढ़ाई, "हर वक्त मैं अपने आप को टटोलता रहता. ऐक्टिंग कर पाऊंगा या नहीं? मगर मेरा आत्मविश्वास कहता, मैं जरूर ऐक्टिंग कर सकूंगा . . . करूंगा . . . और तब, जब मुझे स्कूल के एक ड्रामे में ऐक्टिंग का मौका मिला, तो खुशी का ठिकाना न रहा. मगर यह खुशी लगता था हौले से मन में कहीं चुभ-सी उठती थी कि बेटे हजारों लोगों के सामने अभिनय कर पाना खेल नहीं . . ." उन्होंने पास रखे थ्री फाइव के डिब्बे का ढक्कन खोलते-खोलते आगे कहना शुरू किया, "यह पहला पार्ट जो मुझे मिला, वह था एक दरबान का और जो डॉयलाग मुझे बोलना था वह था 'जो आज्ञा, महाराज' . . ."

शर्मिला टैगोर जोर से हंस पड़ीं. मरदाने ठहाकों के बीच उनकी हंसी हारमोनियम-सी बज उठी. राजेश ने बजाय सिगरेट के, डिब्बे में से सुपारी का चूरा निकाल लिया. फिर हथेली पर लेकर एक फंकी मारी और बातचीत का सिलसिला आगे बढ़ाया, "बीस दिन पहले से मैंने तैयारी शुरू कर दी. बाथरूम के आईने में अपनी शकल देखता तो मुस्करा कर कहता 'जो आज्ञा,

kissekahani.com

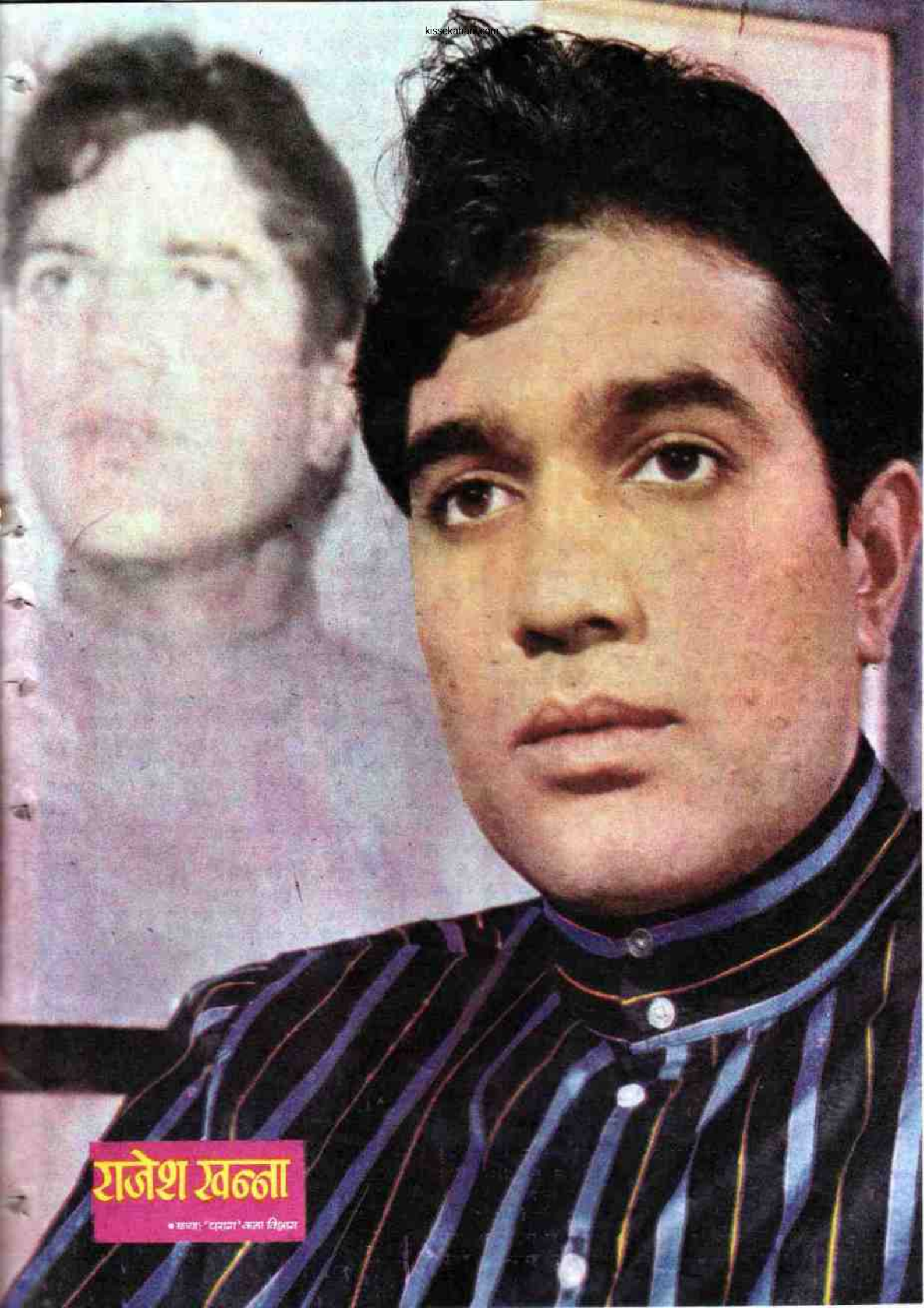

राजेश खन्ना

• सबका 'दादा' कला विशेष

kissekahani.com

महाराज!' मां कहतीं—'काका खाना तैयार है' तो मैं दरबानी पोज में सिर झुकाकर कहता 'जो आज्ञा, महाराज!' सड़क चलते किसी से टकराया तो सॉरी की जगह मुंह से निकलता 'जो आज्ञा, महाराज!'

लोग हंसते-हंसते दोहरे हुए जा रहे थे. तभी किसी ने सूचना दी, दूसरा शॉट तैयार है. शर्मिला उठ खड़ी हुई. राजेश भी उठ खड़े हुए. सेट पर जाने से पहले किस्सा खत्म करना था, अतः चलने को होते-होते बोले, "फिर मैं सिर पर भारी पगड़ बांधे हाथ में लंबा बांस का डंडा लिये और नकली मूंछें लगाए स्टेज पर थर-थर कांप रहा था. लोगों के सामने पहुंचते-पहुंचते तो पसीने-पसीने हो गया. लगा मूंछें अब गिरीं तब गिरीं. किसी तरह ऊपर के ओंठ से मूंछ दबाई कि शहंशाह ने हुक्म दिया 'जाओ, राजकुमारी को अभी बुला लाओ,' मैंने सिर झुकाया, मगर लगा डॉयलाग बोला तो मूंछें गईं . . . वैसे ही सिर झुकाए बगैर एक शब्द बोले स्टेज से भाग खड़ा हुआ . . . हाय जिस डॉयलाग का इतने दिनों रियाज किया उसका सत्यानाश कंबख्त उन मूंछों ने एक सैकिंड में कर दिया . . ."

और हम सब को खिलखिलाते छोड़ वह सेट पर चले गए. पंखे घूमने बंद हो गए और एक घुटन-सी चारों तरफ फैल गई. एक मूड से दूसरे मूड में आने में राजेश को पल की भी देर नहीं लगती.

दुबारा बड़ी देर बाद बातचीत का सिलसिला जमा. अब वह पूरे आराम के मूड में थे. उन्होंने टाई की नॉट ढीली कर ली थी और कोट भी कंधों तक समेट लिया था. बगल में बैठे अपने दोस्त के कंधे पर हाथ मारते हुए बोले, "जैसे-जैसे बड़ा होता गया, मुझे लगा ऐक्टिंग बहुत ही कठिन चीज है . . . पर मुझे तो यह शौक पूरी तरह लग चुका था. एक बार एक ड्रामे के रिहर्सल में गया, तो कलाकारों को टकटकी लगाकर देखता रहा. मेरी बड़ी इच्छा थी कि कोई कलाकार मुझसे बात करे मगर मेरी तरफ किसी ने ध्यान तक न दिया . . . काम करने की इच्छा बार-बार मन में उठती थी, पर मारे शर्म के कुछ कहा न जाता था . . . खैर, एक दिन कुछ ऐसा संयोग बना कि मुझे एक पुलिस अफसर का रोल मिल गया . . . मैं बड़ा खुश. वह नाटक नागपुर में खेला गया," राजेश जरा रुके, "पहले तो मूंछें दगा दे गई थीं, मगर इस बार आवाज दगा दे गई. कंबख्त ऐन मौके पर गले से नदारद हो गई . . . सारे ड्रामे पर पानी फिर गया . . . सच अगर आवाज मूंछ होती, तो मैं उसे भी रोशनदान से बाहर फेंक देता!"

"तब तो आपने सोच लिया होगा ऐक्टिंग आपके बस की बात नहीं है?"

"नहीं, इस असफलता ने मुझे जिद्दी बना दिया . . . अभिनय के बारे में मुझे जो भी देशी या विदेशी किताब मिलती, मैं उसे चाट जाता. बस यूं समझिए ऐक्टिंग की दुनिया में मैं खो गया. छोटी-मोटी नाटक की भूमिकाओं से बड़ी-बड़ी भूमिकाओं तक पहुंच गया. 'कस्तूरी मृग' नाटक में और लोगों ने तो मेरी सिर्फ तारीफ ही की, मगर स्व. गीता बाली ने मेरी ऐसी पीठ ठोंकी कि मैं खुद अपने बारे में हैरत में पड़ गया . . ."

"तब तो यहीं से आपको गलतफहमी हुई होगी कि आप फिल्मों में भी काम कर सकते हैं?"

उन्होंने फिर सुपारी का चूरा निकाला, इत्मीनान से फंकी मारी, एक-दो की ऑटोग्राफ बुक्स में दस्तखत किए, एक-दो काम से आए व्यक्तियों को शाम को मिलने को कहा, चाय की फरमाइश की और 'मैं क्या कह रहा था . . .' के साथ कुछ देर सोचने की मुद्रा बनाई, फिर बोले, "हां तो आपने पूछा . . . अरे बड़ी आसान बात है. यूनाइटेड प्रोड्यूसर्स और फिल्मफेयर का नए अभिनेताओं की जरूरत वाला इश्तहार निकला, दोस्तों की राय पर मैंने एप्लाई कर दिया . . . धड़कते दिल से इंटरव्यू दिया. जब स्क्रीन टेस्ट लिया गया, तो मेरे मन में खलबली मच गई कि मैं परदे पर कैसा लगूंगा . . . साथ ही मुझे लग रहा था मैं चुन लिया जाऊंगा . . . यह भी हो गया और मैं फिल्मों में आ गया . . ."

कैंटीन से ग्लासों में चाय आ गई थी और दो आने के चार वाले खारी बिस्किट. 'भूख लगी है' कहकर राजेश ने दो बिस्किट एक साथ उठा लिये. [illegible] राजेश, जिनके पीछे प्रोड्यूसर घूमते रहते हैं, कितने [illegible] उसमें से राजेश खादी का कुरता पहने दो लड़कियां जिनकी उम्र सत्रह-अठारह साल होगी उनकी तरफ बढ़ीं. एक के कुरते पर लिखा था राम-राम . . .

"राजेश का मतलब राम-राम तो नहीं है . . ." किसी ने हौले से फब्ती कसी, तो वे शरमा गईं. राजेश ने मुस्करा कर उन्हें दस्तखत दिए.

"क्या बात है आपको लड़कियां बहुत चाहती हैं . . .?"

"नहीं तो . . ." वे चौंके, "मुझे चाहने वालों की रेंज छह बरस के बच्चों से साठ सत्तर साल के बुजुर्गों तक है . . . बच्चों को 'हाथी मेरे साथी' पसंद आई, बुजुर्गों को 'आनंद', किसी को 'सच्चा झूठा' तो किसी को 'आराधना' . . ."

"हां, यह तो बताइए," हमने पूछा, "आप अपनी फिल्मों का चुनाव कैसे करते हैं? 'आनंद', 'आराधना' जैसी फिल्मों के साथ-साथ 'सच्चा झूठा', 'हाथी मेरे साथी' जैसी फिल्मों में काम करना आपको क्या वाकई अच्छा लगता है . . .?"

बात का आशय वह समझ गए. चाय का गिलास मेज पर रखते हुए बोले, "हर पिक्चर के साथ देखने वालों की कोई न कोई भावना जरूर संतुष्ट होती है. मैं पिक्चरें चुनते वक्त इस बात का बड़ा खयाल रखता हूं कि वे कॉमन मैन से कितना नजदीकी रिश्ता रख सकती हैं. मैं उन चीजों से कतराता हूं जो अश्लील हैं . . . मेरी पिक्चरों में आपको वलगैरिटी नहीं मिलेगी. मैं चाहता हूं मेरी फिल्में लोग परिवार समेत देखें . . . इनमें अगर सैक्स भी हो तो ऐसा हो जो देखने में स्वीट लगे, न कि लोगों को भड़काए . . . इन बातों के तहत मैं 'हाथी मेरे साथी' हो या 'आनंद' किसी को भी ऊंची-नीची दृष्टि से नहीं देखता. मेरी नजर में मेरी सब फिल्में बराबर हैं, क्यों कि उन्हें दर्शकों ने समान रूप से चाहा है . . ."

"खैर," तुरंत हमने पूछा, "आप अपने दीवाने प्रशंसकों के बारे में क्या सोचते हैं? क्या यह अच्छी बात है कि वे किसी फिल्म स्टार को अपना आदर्श पुरुष मानें . . .?"

"जो शुभ है, सुंदर है, मनोहर है और जो हमेशा दूसरों के लिए अच्छा है अगर इस बात को ध्यान रखकर किशोर लोग किसी को आदर्श मान लें तो कोई हर्ज की बात नहीं . . ." वह बोले, "मगर उसकी पूजा करें, यह मैं नहीं चाहता. इसी भावना को ध्यान में रखकर मैंने अपने ऐक्टर और व्यक्तिगत रूप के बीच कोई परदा कभी नहीं रखा. मैंने भरसक कोशिश की है कि मेरे चाहने वालों को यह न लगे कि मैं आसमान का तारा हूं. मुझे सब नजदीक से छू सकें और सबके बीच में मैं सब जैसा लगूं . . ."

वह चुप हो गए. उनके चेहरे की गंभीरता जैसे आसपास छा गई. वातावरण को चुलबुला बनाने की गर्ज से हमने उन्हें छेड़ा, "छोड़िए इन बातों को, अब अपने इश्क-विश्क के किस्से सुनाइए; शादी के बारे में बताइए ताकि आपको इस दृष्टि से चाहने वाली लड़कियों का कुछ भला हो . . ."

यह सुन कर पहले कुछ देर पशोपेश में पड़े रहे, फिर कुछ सोचकर वह बोले, "अरे बाबा, प्यार तो कुदरती भावना है . . . अभी तक तो अपना किसी से हुआ नहीं, अगर हो गया तो जरूर उस दिन बाजे बजवा देंगे . . ."

मैंने एक महत्वपूर्ण प्रश्न उनकी खूबसूरती के बारे में पूछ डाला! वह हंसे. तब तक शक्ति सामंत ने शॉट रेडी होने की सूचना दी. राजेश ने टाई की नॉट ठीक की. कोट के बटन लगाए और उठ खड़े हुए. चलते-चलते बोले, "अभी भी लगता है मुझे बहुत कुछ सीखना बाकी है . . . अभी तो ऐक्टिंग का क-ख-ग भी अच्छी तरह नहीं सीखा है . . . अरे, आपने पूछा कि क्या ऐक्टर के लिए हैंडसम होना जरूरी है . . .? नहीं-नहीं, मैं इसे नहीं मानता. खुद मेरी अपनी सूरत के प्रति मेरी कोई अच्छी राय नहीं रही. मगर अपनी कला के बारे में मुझे काफी भरोसा था . . . यही उनको भी होना चाहिए जो गंभीरता के साथ इस फील्ड में आना चाहते हैं . . . जो मेहनत करके भी भूखे रहने और भूखों की तरह ही सो जाने की सहन शक्ति रखते हैं, वे ही बड़े बन सकते हैं!"

वह मुसकराते हुए विदा हो गए.

—हरीश तिवारी

kissekahani.com

किशोर जीवन का आकलन (पृष्ठ 35 से आगे)

'हमारे घर में नवभारत टाइम्स आता है. वही पढ़ लेता हूं.'
'पूरा? रोज़?'
'नहीं, बस ऐसे ही!'
'उपन्यास पढ़ते हो?'
'नहीं, पिता जी ने मना किया है.'
'पढ़ने को मन नहीं होता?'
'नहीं होता.'
'शादी?'
'अभी तो टाइम है,' वह शरमा कर उत्तर देता है.
'कैसे?'
'अभी दो बहनों की शादी होनी है. फिर बड़े भइया की.'
'प्रेम?'
'प्रेम-व्रेम बकवास है, जी!'
'क्या बनना चाहते हो?'
'बस जो भी पिता जी चाहें.'
मैंने सिधानिया से और कुछ पूछना बंद कर दिया.

मैंने बड़ी आत्मीयता के साथ अपने इन किशोर साथियों से बातें की हैं. ये सभी हमारे उच्च वर्गीय किशोर हैं. खाते-पीते घरों से संबंधित. सभी सुविधाओं से सम्पन्न. आज़ादी के बाद, विशेष रूप से बड़े नगरों में, हमारे इस वर्ग का तेज़ी से विकास हुआ है. इन बालकों के सामने जीवन-यापन की कोई समस्या नहीं है. अच्छे पब्लिक स्कूलों में पढ़ते हुए हमारे ये किशोर बालक भविष्य के प्रति निश्चित हैं. जीवन के सभी सुख इन्हें प्राप्त हैं. लेकिन इस सुख और सुविधा-सम्पन्नता की दो अलग-अलग प्रतिक्रियाएं मैंने इनमें देखी हैं. मैंने देखा है कि हमारे इन किशोरों का एक वर्ग सामान्यतः अपने माता-पिता की अपेक्षा अपनी आयाओं, गवर्नेसों तथा शिक्षकों पर अधिक निर्भर है. अपनी अतिशय व्यस्तता के कारण माता-पिता व्यक्तिगत रूप से इन पर पूरा ध्यान नहीं दे पाते, और यही कारण है कि हमारा यह किशोर-वर्ग अनेक अवसरों पर उच्छृंखलता, लापरवाही और गैरज़िम्मेदारी की प्रवृत्तियों में फंस जाता है, जिससे आगे चलकर हमारे समाज में अनेक प्रकार की समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं. दूसरी ओर ऐसे माता-पिता भी हैं, जो अपनी व्यस्तता के बीच भी अपने बच्चों की देख-रेख के लिए कुछ समय निकाल ही लेते हैं.

लेकिन यही तो सब कुछ नहीं है. अपने इन किशोरों से बातें करके ऐसा लगता है कि इस बड़ी दुनिया के बीच, इनकी सुविधा और सम्पन्नता से पूर्ण अपनी एक अलग दुनिया है, जिसमें रचनात्मक कार्य के लिए दृष्टि, आकांक्षा और साहस का अभाव है. सामान्यतः 'खाओ, पियो और आनंद करो' ही जैसे हमारे इन बालकों का उद्देश्य हो गया है और वही आदर्श भी! और इस प्रकार के आदर्श के रहते हुए अपने इन बालकों से हमें देश के हित-साधन में उस समय तक कोई योग नहीं मिल सकता, जब तक कि ये बालक अपने आपको आर्थिक दृष्टि से सुरक्षित समझते हैं. हमारे ये बालक जानते हैं कि पिता का पैसा एक न एक दिन उनका ही होगा और होता भी यही है. इसी लिए इनमें जीवन को गंभीरता से लेने की प्रवृत्ति विकसित नहीं हो पाती. लेकिन इसके लिए हम अपने इन बालकों को दोषी नहीं ठहरा सकते. हमारे ये बालक अपने जीवन, समाज और देश के लिए गंभीरता से सोचें, इसके लिए शिक्षा के क्षेत्र में आमूल परिवर्तन लाने की आवश्यकता है. आज की इस गतिहीनता के लिए हमारी शिक्षा प्रणाली और हम शिक्षक ही विशेष रूप से उत्तरदायी हैं. इतने ही उत्तरदायी वे अभिभावक हैं जो अपने बच्चों को वैतनिक नौकरों के सहारे छोड़कर, उनकी ओर से निश्चित हो जाते हैं. आखिर उस अतिरिक्त कमाई का क्या लाभ, जिसके लिए हमें अपनी संतान की उपेक्षा करनी पड़े? हम इतने अधिक व्यस्त हो जाएं कि हम अपने बच्चों की सुख-सुविधा, आशा-आकांक्षा की ओर ध्यान ही न दे सकें! यह बात नहीं कि हमारे शिक्षक और अभिभावक इस सच्चाई को नहीं जानते. फिर भी हम देखते हैं कि इस दिशा में कोई प्रगति नहीं हो रही है.

प्रोफेसर्स फ्लैट्स, रुइया कॉलेज हॉस्टल, शीव, बम्बई-22.

पापा को समझाओ सप्ताह (पृष्ठ ४५ से आगे)

समीर के पापा ने कहा.

"यह किशोर-जागरण है, अंकल! यह सब हम अपने अंध-विश्वासग्रस्त साथियों के हित के लिए कर रहे हैं, उन्हें अंध-विश्वास के चंगुल से निकालने के लिए कर रहे हैं. अंध-विश्वास हमारे समाज का बहुत अनिष्ट कर रहा है," अशोक ने कहा.

"उदाहरण सुनिए . . . ," सुमीत ने कहा, "अपना एक साथी सोमवार को अशुभ मानता है. उसे लगता है कि सोमवार कुछ अप्रिय प्रसंग लेकर आएगा. उसे तीन सोमवारों को बुखार आया था. चौथे सोमवार को उसके दादा का निधन हुआ था. पांचवें सोमवार को उसकी जेब कट गई थी. अपने अब तक के पांच सौ सोमवारों में से यदि पांच खराब निकल गए, तो क्या सब सोमवार अशुभ हो गए?"

"अपने एक मित्र ने साइकिल चलाना छोड़ दिया है. उसका विचार है कि साइकिल उसके लिए अशुभ है, क्योंकि साइकिल से वह तीन बार दुर्घटनाग्रस्त हुआ है. यदि किसी पैदल चलने वाले का तीन बार केले के छिलके पर पैर फिसल जाए या अन्य किसी कारणवश दुर्घटना हो जाए, तो क्या वह पैदल चलना छोड़ देगा?" शरद ने प्रश्न किया.

समीर के पापा कुछ कसमसाए शरद की बात पर, किंतु मौन रहे.

"और एक महाराज हैं कि परीक्षा के दिनों में हर सुबह उठते ही अपनी बहन का शुभ मुख देखते हैं. उनका विचार है कि बहन का मुख देखकर उठने से प्रश्नपत्र बढ़िया जाता है! इस वर्ष बहन का विवाह हो गया है. परीक्षाएं आ रही हैं. वह परीक्षा के दिनों में बहन को बुलाने के लिए पत्र पर पत्र डाल रहे हैं!" राजीव ने कहा.

"यह सब क्या उचित है, अंकल?" अशोक ने पूछा.

"नहीं . . . उचित तो नहीं है, किंतु . . . किंतु मैं इस दिशा में क्या कर सकता हूं ?" समीर के पापा ने आश्चर्य से पूछा.

"आप बहुत कुछ कर सकते हैं. आपकी बात का गहरा प्रभाव पड़ेगा. अंध-विश्वास के भंवर में चक्कर खाते बच्चों को आप उबार सकते हैं. अंध-विश्वास उन्मूलन सप्ताह के अंत में हमने नगर के कुछ प्रगतिशील व्यक्तियों को इस विषय पर अपने विचार व्यक्त करने के लिए आमंत्रित किया है. हम आपको इस आयोजन का सभापति बनाना चाहते हैं!" अशोक ने कहा.

"मैं . . . मुझे यानी कि मुझे सभापति . . . मैं . . . मैं . . . इसके . . . !"

"हां, अंकल, सभापति आप ही होंगे. दो महीने में आपके स्कूटर से दो दुर्घटनाएं हुईं और आपने स्कूटर को अशुभ नहीं माना. इस आयोजन के लिए आपसे उपयुक्त, आपसे योग्य कौन होगा?" अशोक ने कहा.

सुमीत, शरद, राजीव ने उसका अनुमोदन किया.

समीर के पापा कुछ देर ना-नुकर करते रहे, किंतु अंत में उनके प्रस्ताव से सहमत हो गए.

जब वह चारों बाहर निकले, तो समीर भी उनके साथ था. समीर की ओर देखते ही न जाने कब और कैसे अशोक की एक आंख चट से बंद होकर पट से खुल गई!

सी-डी-2, सैक्टर-3, पोस्ट ध्रुवा, रांची.

kissekahani.com

* जितेंद्रकुमार चतुर्वेदी

डाक-टिकटों की कहानी डाक-टिकटों की जबानी

वर्तमान युग में हम अपने घर, व्यवसाय, शिक्षा आदि के संबंध में आवश्यक सूचनाएं अपने संबंधियों, मित्रों आदि के पास पहुंचाते रहते हैं. सूचनाएं पहुंचाने के लिए हमें विभिन्न प्रकार के साधन भी उपलब्ध हैं. डाक-व्यवस्था भी उन्हीं साधनों में से एक है. टिकट लगे हुए लिफाफों में अपना पत्र रखकर हम डाक घर की पत्र-पेटी (लेटर बॉक्स) में डाल देते हैं. परंतु क्या किसी ने यह सोचा है कि डाक-टिकटों का प्रचलन कब से प्रारंभ हुआ और इनका विकास कैसे हुआ? क्या आपको डाक-टिकटों की कहानी मालूम है? यदि नहीं, तो हम बताते हैं.

संसार में टिकटों का प्रचलन सर्वप्रथम 6 मई 1840 को इंग्लैंड से प्रारंभ हुआ था. प्राचीन समय में डाक-टिकटों की आकृति, रंग, आकार आदि पर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता था. आजकल टिकटों का निर्माण सुंदर से सुंदर ढंग से कैसे किया जाए, इस बात पर विशेष ध्यान दिया जाता है.

kissekahani.com

लगभग 125 वर्षों की इस दीर्घायु में प्रथम डाक-टिकट के परिवार वालों ने अत्यधिक उन्नति कर ली है. वे विश्व के अनेकों मनुष्यों का मनोरंजन करते हैं. विभिन्न रंगों, आकृतियों तथा आकारों में मुद्रित ये डाक-टिकट मानव जगत का मनोरंजन ही नहीं करते हैं, वरन् मनुष्य की ज्ञान-वृद्धि में भी मदद करते हैं. इस डाक-टिकट परिवार के अनेकों सदस्य अपने पूर्वज टिकटों के जीवन पर भी प्रकाश डालते हैं. वे यह बताते हैं कि उनके अमुक पूर्वज का जन्म कब हुआ और किस देश में हुआ? उनका मूल्य क्या था और वे किस विषय और अवसर पर जारी किए गए थे? इस प्रकार अल्पायु डाक-टिकट अपने दीर्घायु पूर्वज डाक-टिकटों के जीवन के बारे में ज्ञान प्राप्त करने में मदद करते हैं. ऐसे टिकटों की संख्या डाक-टिकट परिवार के अन्य सदस्यों की अपेक्षा बहुत कम है. ऐसे ही डाक-टिकटों में से कुछ का परिचय नीचे लिखे अनुसार है :

चित्र नं. 1, 2, 3 पर अंकित डाक-टिकटों का जन्म सोवियत संघ में सन् 1961 में हुआ था. इन डाक-टिकटों का मूल्य 4 कोपेक, 6 कोपेक तथा 10 कोपेक है. इन टिकटों पर उद्योगों, क्रांतियों तथा इमारतों के चित्र अंकित हैं. इन तीनों डाक-टिकटों पर पुराने डाक-टिकटों के चित्र अंकित हैं. चित्र नं. 3 के टिकट पर अंकित प्रथम टिकट सन् 1961 में जारी किया गया था. इस टिकट पर एक अंतरिक्षयान जो 12 अप्रैल 1961 को पृथ्वी से छोड़ा गया था तथा अंतरिक्ष यात्री का चित्र अंकित है.

चित्र नं. 4 पर अंकित डाक-टिकट फिलीपाइन नामक देश का है जो सन् 1954 में जारी किया गया था. इस टिकट पर जिस अन्य टिकट का चित्र अंकित है वह सन् 1854 में जारी किया गया था. इस टिकट का मूल्य 18 सेंटवोस था जो बाद में बदल कर 10 सेंट कर दिया गया.

चित्र नं. 5 पर पोलैंड द्वारा जारी किए गए डाक-टिकट का चित्र है. 60 ग्रोजी मूल्य के इस टिकट पर पोलैंड द्वारा जारी किए गए एक प्राचीन डाक-टिकट का चित्र अंकित है जिसका मूल्य 55 ग्रोजी था.

चित्र नं. 6 पर दक्षिण अमेरिका के एक गणराज्य कोलम्बिया के एक दुरंगे डाक-टिकट का चित्र अंकित है, जो सन् 1959 में कोलम्बिया के प्रथम डाक-टिकट के शताब्दि वर्ष के अवसर पर जारी किया गया था. इस टिकट का मूल्य 10 सेंटवोस है. इस टिकट पर एक प्राचीन कोलम्बियन स्टेट के डाक-टिकट का चित्र अंकित है. कोलम्बिया का प्रथम डाक-टिकट सन् 1859 में जारी किया गया था.

चित्र नं. 7 पर दक्षिणी अफ्रीका संघ द्वारा सन् 1953 में जारी किए गए एक डाक-टिकट का चित्र अंकित है. यह टिकट दक्षिण अफ्रीका संघ के सदस्य राज्य 'केप ऑफ गुड होप' (आशा अंतरीप) द्वारा जारी किए गए प्रथम डाक-टिकट के शताब्दि समारोह के अवसर पर जारी किया गया था. इस टिकट पर 'केप ऑफ गुड होप' द्वारा जारी किए गए एक तिकोने डाक-टिकट का चित्र अंकित है. 'केप ऑफ गुड होप' का प्रथम टिकट सन् 1853 में जारी किया गया था. सन् 1910 में यह राज्य दक्षिण अफ्रीका संघ में सम्मिलित हो गया. दक्षिण अफ्रीका संघ के इस दुरंगे टिकट का मूल्य 1 पेंस है, जबकि इस टिकट पर अंकित टिकट का मूल्य भी एक पेंस था.

अप्रैल 1963 में हंगरी द्वारा एक सुंदर डाक-टिकट माला जारी की गई. इस टिकट माला के अंतर्गत टिकटों पर अंतरिक्ष विज्ञान संबंधी चित्र अंकित हैं. इन टिकटों के मूल्य 30, 40, 50, 60, 80 फिलर, 1 फोरिंट, 1.20 तथा 1.40 फोरिंट हैं.

30 फिलर मूल्य के टिकट पर बल्गेरिया द्वारा जारी किए गए 2 लेव मूल्य के टिकट का चित्र अंकित है. 40 फिलर के टिकट पर चेकोस्लोवाकिया द्वारा जारी किए गए 80 हेलर के टिकट का चित्र अंकित है. 50 फिलर के टिकट पर चीन द्वारा जारी किए गए टिकट का चित्र अंकित है. 60 फिलर मूल्य के टिकट पर जापान द्वारा जारी किए गए टिकट का चित्र अंकित है. 80 फिलर मूल्य के टिकट पर पोलैंड द्वारा जारी किए गए 40 ग्रोसी के टिकट का चित्र है जिस पर 'स्पुतनिक' तृतीय का चित्र अंकित है.

1 फोरिंट के टिकट पर हंगरी द्वारा जारी किए गए 60 फिलर मूल्य के टिकट का चित्र अंकित है, जिस पर 2 फरवरी 1961 को छोड़े गए वीनस उपग्रह को राकेट से अलग होते हुए बताया है. 1.20 फोरिंट के टिकट पर मंगोलिया के उस टिकट का चित्र अंकित है जो 1959 में छोड़े गए 'लूनिक' की स्मृति में जारी किया गया था.

1.40 फोरिंट मूल्य वाले टिकट पर पूर्वी जर्मनी द्वारा जारी किए गए 25 फेनिग मूल्य के टिकट का चित्र अंकित है (चित्र नं. 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 15).

टोगोलैंड की डाक-व्यवस्था की 65वीं वर्षगांठ के अवसर पर सन् 1962 में टोगोलैंड द्वारा 0.30 फ्रेंक, आधा फ्रेंक तथा 1 फ्रेंक मूल्य के तीन टिकट जारी किए गए. इन तीनों टिकटों पर टोगोलैंड द्वारा प्राचीन समय में जारी किए गए टिकटों के चित्र अंकित हैं (चित्र नं. 16, 17, 18). ●

25 पीर गली, इंदौर-4 (म. प्र.).

रंग भरो प्रतियोगिता नं. १०७ का परिणाम

'पराग' की रंग भरो प्रतियोगिता नं. 107 में जिन तीन प्रतियोगियों के चित्रों को पुरस्कार योग्य चुना गया, उनके नाम और पते इस प्रकार हैं :

● **सुनील कुमार सक्सेना, द्वारा श्री जगत नारायण सक्सेना, 167 पल्टन बाजार, प्रतापगढ़ (उ.प्र.).**

● **तराना जलील, द्वारा श्री ए. जे खान, खान हाउस, पूरनदाहा, बी. देवघर (एस.पी.), बिहार.**

● **विजयकुमार सुदेश, सुपुत्र श्री गुलजारीलाल सुदेश, धोला चौतरा, पाली मारवाड़ (राज.).**

प्रयास करने वाले दूसरे बच्चों में से इनके प्रयास अच्छे रहे.

अजीत कुमार, पतरातू; विपिन चंद्र पांडेय, अल्मोड़ा; अनिल कुमार बंसल, रामपुर; अखिलेश कुमार सिंह, टूंडला; साधना डांड, रायपुर; नीलिमा श्रीवास्तव, लखनऊ; नरेंद्र सिंह पंवार, पाली मारवाड़; प्रकाश श्रीधर किदवई, नागपुर; सुभाषचंद्र पाल, गोरखपुर; प्रदीप अग्रवाल, नई दिल्ली-48; प्रकाशवती, खतौली; राजेंद्र प्रसाद सक्सेना, ग्राम पखुनी; गिरीश कुमार ताम्रकार, जबलपुर; अशोक लुथानी, लखनऊ; नीलिमा जैन, मुजफ्फरनगर; सुधा सक्सेना, अलीगढ़; भरतलाल माखीजा, रायपुर; जी. प्रेम राव, कोयंबतूर-1; जब्बार हुसैन, जौनपुर; नीना भार्गव, नई दिल्ली-23; शमशेर बहादुर सिंह, पठानकोट; मधु ग्रोवर, अलीगढ़-10; अमित अग्रवाल, बिलग्राम; प्रतापचंद्र सामल, मोतीझरन; रजनीश सिंह, कानपुर-2; तेजपाल सिंह खुराना, कानपुर; माधवी गर्ग, अल्मोड़ा; सरोज उपाध्याय, हरिनगर; अनिल कुमार शर्मा, मेरठ शहर; एस.एम. सलाहउद्दीन, मुजफ्फरपुर; मोती लाल मौर्य, इलाहाबाद-2; कुमारी मुकुलिका, नई दिल्ली; विभा जौहरी, मिर्जापुर; अनिता पाल, मथुरा; विद्या सागर मिश्रा, पटना-1; बिन्दु कुमारी जैन, सीतापुर; अजयकुमार सिंह, औरंगाबाद; शोभा रानी, कानपुर; मृदुल कुमार जैन, वाराणसी; अरुण कुमार मिश्रा, एटा; सलीम सरदार पटेल, बंबई-64; अनिल कुमार अग्रवाल, नई दिल्ली-48; सुनील कुमार अग्रवाल, नई दिल्ली-48; शशि मैठाणी, देहरादून तथा अजय कुमार, नई दिल्ली-22.

kissekahani.com

फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से नियमित रूप से ब्रश करने से मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न दूर ही रहती है।

क्योंकि फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट दाँतों और मसूढ़ों, दोनों की रक्षा करता है।
यह दाँतों के डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट है। इस टूथपेस्ट में मसूढ़ों की रक्षा के लिए कई खास तत्व मिले होते हैं।
मसूढ़ों की तकलीफ़ और दाँतों की सड़न रोकने का सबसे बढ़िया तरीक़ा है, दाँतों को नियमित रूप से सुबह और रात को फ़ोरहॅन्स टूथपेस्ट से ब्रश करना। आपके बच्चे को यह ज़रूरी बात सिखाने का समय यही है—उसका बचपन। जी हाँ, अभी, इसी उम्र में उनमें सीखने की बड़ी लगन रहती है। इसलिए यह शुभ शुरूआत आज ही से क्यों न की जाय!

फ़ोरहॅन्स से दाँतों की देखभाल सीखने में देर क्या सबेर क्या

फ़ोरहॅन्स
—दाँतों के एक डाक्टर का बनाया हुआ टूथपेस्ट

मुफ़्त! **"दाँतों और मसूढ़ों की रक्षा" नामक रंगीन सूचना पुस्तिका**
१० भाषाओं में मिलती है। मँगवाने का पता है: मैनर्स डेण्टल एडवाइज़री ब्यूरो, पोस्ट बैग १००३१ बम्बई-१ बी आर

नाम: _____ उम्र _____
पता: _____
P.10

*कृपया (डाक-खर्च के लिए) २० पैसे के टिकट साथ भेजिए और इनमें से अपनी पसन्द की भाषा के नीचे रेखा खींच दीजिए: अंग्रेजी, हिन्दी, मराठी, गुजराती, उर्दू, बंगाली, तामिल, तेलगु, मलयालम, कन्नड़

92F-203D HIN

kissekahani.com

खिलाड़ी और खिलाड़ी

(पृष्ठ 18 से आगे)

उन्माद की हालत में मैंने तरडे की अगली गेंद पर बल्ला घुमाया और दौड़ पड़ा. दो रन लिये.

सैंचुरी! दर्शकों में से दो-तीन छोकरे फूल-मालाएं लिये दौड़े चले आ रहे थे.

मगर मेरी खुशी पर एक और भाव जम रहा था—आश्चर्य का और दुःख का.

दो-तीन और रन बनाकर मैं आउट हो गया. मेरे प्रशंसक मुझे कंधों पर मैदान से लाये.

बधाइओं का तांता लग गया.

"वाह! क्या शानदार बैटिंग की है!" वे कह रहे थे.

"आपको तो इस साल के शहर के 'बेस्ट स्पोर्ट्समैन' का खिताब दिया जाना चाहिए." ये शब्द मेरे हृदय में बिंध गए.

मैंने अपने आप पर हंसना चाहा. स्पोर्ट्समैन वह जिसमें 'स्पोर्ट्समैनशिप' हो. 'स्पोर्ट्समैन' वह जो खेल को खेल की भावना से, प्रतिद्वंद्वी के लिए भी सौहार्द रखते हुए खेले. व्यक्तिगत मान-अपमान या सफलता-विफलता का प्रश्न बनाकर नहीं. महत्व इसका नहीं कि कौन जीता, इसका है कि ईमानदारी से कौन खेला.

"माफ कीजिए," भर्राए हुए गले से मैंने कहा, "मानता हूं कि मैं अच्छा खेला; मगर मुझ से भी अच्छा खेला वह शख्स जो मेरा विपक्षी होने के बावजूद ईमानदारी से यह कह सका कि मैं आउट नहीं हुआ हूं, आउट दिए जाने के बावजूद! ... और क्या आप जानते हैं कि एक समय मेरी एक गलत गेंद की चोट खाकर वह अपने दांत गंवा चुका है!"

चाय-पान का अवकाश हुआ है. हमारे आखिरी दो बल्लेबाज और 'गांधी क्लब' के खिलाड़ी पेवेलियन की तरफ आ रहे हैं.

मैं अजय के पास पहुंचता हूं.

"अजय," मैं धीमे से पूछता हूं, "तुम्हारी चोट कैसी है?"

"ठीक है, क्यों?" वह मेरी तरफ देखता है.

"मैंने जान-बूझकर वैसी गेंद फेंकी थी ..."

"मैं जानता हूं."

"कितनी गंदी बात थी वह!" मेरे भीतर की ग्लानि उफन-उफनकर बाहर आने लगती है.

"तो क्या हुआ?" अजय कहता है, "क्या मैंने ... मैंने उस दिन तुम्हें जान-बूझकर आउट नहीं करवाया था!" वह मुस्कराता है, अपनी बात को वजन देने के लिए. मगर साफ जाहिर है, वह झूठ बोल रहा है.

एक बार फिर खुद से जीत गया है यह ... वह खिलाड़ी अजय. और अब टी-टेबिल की तरफ बढ़ रहा है मेरे कंधे में बांह डाले हुए. ●

केमेस्ट्री विभाग, आई. आई. टी.
पवई, बंबई–76.

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता-११०

बच्चो, नीचे का चित्र है न मजेदार! काश, यह रंगीन होता, तो क्या कहना था! चलो, तुम ही रंग भरकर इसे हमारे पास 20 अगस्त तक भेज दो. हां, अगर तुम्हारा खयाल हो कि चित्र की पृष्ठभूमि को तुम अपनी कल्पना से और ज्यादा उभार सकते हो, तो रंगों द्वारा उसे चित्रित करने की तुम्हें स्वतंत्रता है. सबसे अच्छे रंग भरने वाले तीन प्रतियोगियों को एकसे सुंदर इनाम मिलेंगे और उनमें से दो के चित्रों को छापा भी जाएगा. लेकिन रंग भरने वालों की उम्र 14 साल से अधिक नहीं होनी चाहिए और उन्हें 'वाटर कलर' ही उपयोग में लाने चाहिएं. चित्र के नीचे वाला कूपन भरकर भेजना जरूरी है. पूतियां भेजने का पता : संपादक, 'पराग' (रंग भरो प्रतियोगिता नं. 110), 10 दरियागंज, दिल्ली-6.

यहां से काटो

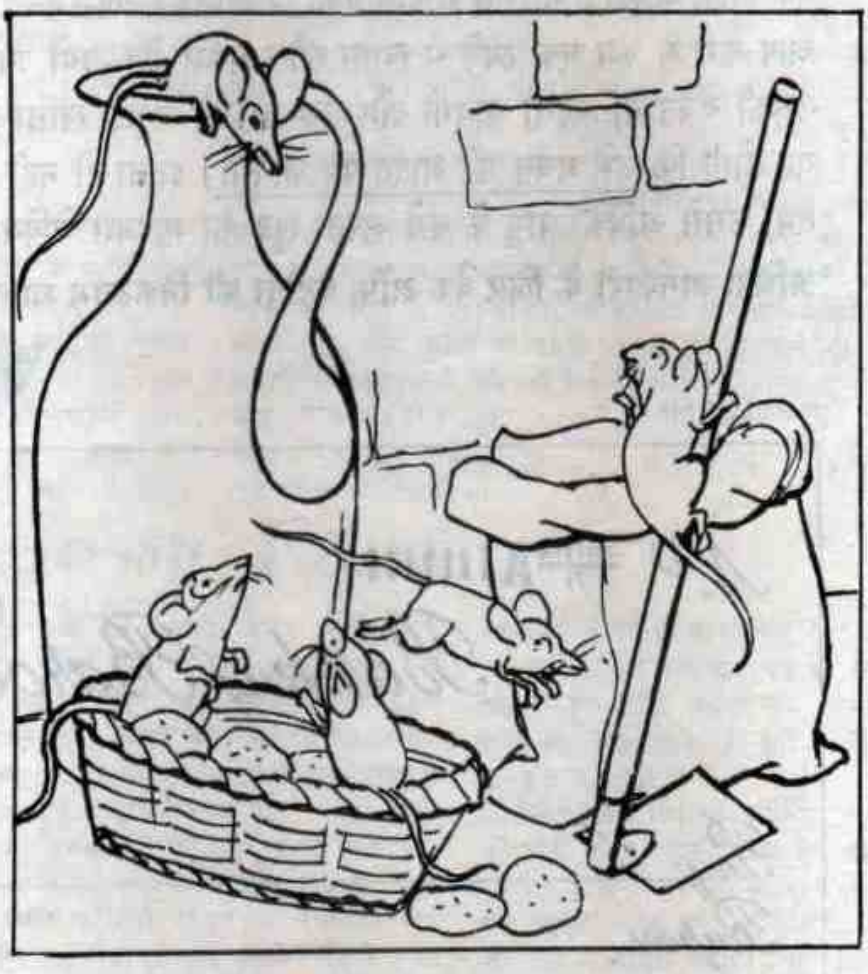

यहां से काटो

यहां से काटो

कूपन

'पराग' रंग भरो प्रतियोगिता – ११०

नाम और उम्र ----------

पूरा पता ----------

यहां से काटो

kissekahani.com

बैंक ऑफ़ बड़ौदा ज़ानता है कि आप अपने बेटे का भविष्य उज्ज्वल बनाना चाहते हैं।

आप आज ही अपने बच्चे का माइनर्स सेविंग्स एकाउंट क्यों नहीं खोल लेते ? धन का इससे बढ़िया विनियोजन भला और क्या हो सकता है।

बैंक ऑफ़ बड़ौदा में माइनर्स सेविंग्स एकाउंट खोलकर अपने बच्चे के उज्ज्वल भविष्य की नींव डालिये। आप कम से कम एक रुपये से खाता खोल सकते हैं। ज्यों ज्यों आपका बच्चा बड़ा होता जायगा उसकी बचत भी बढ़ती जायगी और उस पर उसे अच्छा खासा ब्याज भी मिलेगा। सबसे बड़ी बात यह होगी कि उसे बचत की आदत पड़ जायगी। इतना ही नहीं अब बैंक ऑफ़ बड़ौदा में १० वर्ष तथा उससे अधिक आयु के बच्चे अपना खुद का माइनर्स सेविंग्स एकाउंट खोल व चला सकते है। **अधिक जानकारी के लिए बैंक ऑफ़ बड़ौदा की निकटतम शाखा से संपर्क स्थापित करें।**

mcm/bb/9 hin

बैंक ऑफ बड़ौदा, मुख्य कार्यालय: मांडवी, बड़ौदा. भारत के प्रायः हर राज्य में सेवारत ५५० से भी अधिक शाखाएं। यू. के., पूर्वी अफ्रीका, मारिशस, फीजी द्वीपसमूह तथा गुयाना में भी शाखाएं।

kissekahani.com

देश-विदेश के अनोखे त्योहार (पृष्ठ ४७ से आगे)

बाद ठठरी-नृत्य के नर्तकों के लिए मैदान खाली कर ये भी धीरे-धीरे आंखों से ओझल हो जाते हैं.

ठठरी-नृत्य के नर्तक अपने सिर और मुंह पर जो मुखौटे पहने होते हैं वे मानव-कंकाल के होते हैं. इनके शरीर पर काले कपड़े होते हैं जिन पर सुनहरे और भूरे रंग से हड्डियों के चित्र बने होते हैं. इनकी अंगुलियां भी बड़े-बड़े और पैने पंजों से ढकी होती हैं.

ठठरी-नृत्य के बाद काले टोप वाले नर्तकों की बारी आती है. कुछ नर्तक अपने सिरों पर पिरामिडाकार टोप पहने होते हैं जिन पर छोटी-छोटी खोपड़ियां चिपकी रहती हैं और मोर के पंखों की कई कतारें लगी होती हैं. इन नर्तकों का नेता 'जादूगरों का मुखिया' कहलाता है. सभी नर्तक मुखिया के चारों ओर नाचते हैं जो खड़ा-खड़ा विविध मंत्रों का जाप करता रहता है. यह नृत्य कई घंटों तक चलता रहता है. मुखिया के सामने आग धधकती रहती है और उस पर एक विशाल कड़ाह में तेल खौलता रहता है. अब मुखिया उसमें थोड़ी-सी स्पिरिट डालता है. लौ भभक उठती है. जलता हुआ तेल लौ को लेकर फर्श पर फैल जाता है. फिर जादूगरों का मुखिया उस आग में कागज का एक टुकड़ा डालता है जिस पर भूत-प्रेतों और दैत्यों की शक्लें बनी होती हैं. कागज के स्वाहा होने के साथ ही समझ लिया जाता है कि दुष्ट आत्माओं का असर भी जाता रहा और अब नया वर्ष बिना खटके आ सकता है.

हत्यारा त्योहार !

आज से चार-पांच सौ वर्ष पहले हर वर्ष पतझड़ के मौसम में मैक्सिको-वासी अपनी देवी 'चिकोमैकोहुआल' के स्वागत में बहुत बड़ा त्योहार मनाया करते थे. 'चिकोमैकोहुआल' का अर्थ है मक्का की देवी. उनका विश्वास था कि इससे देवी प्रसन्न होकर उनके खेतों को मक्का से भर देगी.

देवी को प्रतिमूर्त करने के लिए बारह-तेरह वर्ष की खूबसूरत गुलाम लड़की चुन ली जाती थी और उसे देवी के-से वस्त्रों से सजाया जाता था.

दिन भर मक्का की उस काल्पनिक देवी का सारे शहर में जुलूस निकाला जाता और रात को सभी लोग मंदिर में एकत्र होकर मोमबत्तियों की धीमी-धीमी रोशनी में देवी का कीर्तन करते. लगभग आधी रात को मंदिर के पुजारी उस लड़की के चारों ओर परिक्रमा करके उसकी आरती उतारते. वह बेचारी लड़की डरी-डरी-सी देखती रहती कि उसके साथ क्या होने वाला है. इसके बाद सबसे बड़ा पुजारी अपना चाकू निकालता और उस लड़की के सिर से एक ही बार में वह हरा पंख और उसके साथ उसके बालों का जूड़ा भी उतार लेता था. यह जूड़ा और पंख मक्का की देवी की मूर्ति पर चढ़ाया जाता था. इसके बाद उस बेचारी लड़की को इस संसार में अंतिम नींद सोने के लिए ले जाया जाता था.

सुबह होते ही लड़की को फिर देवी की प्रतिमा के सम्मुख लाया जाता था और उसे अनाज और फलों की भेंट चढ़ाई जाती थी. इसके बाद शहर के बड़े-बड़े लोग एक रकाबी में जमा हुआ खून लेकर आते थे. उस खून को खुरचकर वे लड़की के सामने डाल देते थे और समझते थे कि उनकी भेंट देवी ने स्वीकार कर ली है. इस खून को वे लगातार एक सप्ताह तक उपवास रखकर अपने कान में से निकाला करते थे.

और इसके बाद अभिनीत होता था नाटक का अंतिम पैशाचिक दृश्य. उस बेचारी लड़की को कमर के बल अनाज के ढेर पर फेंक दिया जाता था और एक ही झटके में उसका सिर उतार लिया जाता था. सिर के अलग होते ही खून का फव्वारा छूट पड़ता था. इस ताजे खून को देवी की मूर्ति पर और फर्श पर पड़े हुए अनाज पर छिड़का जाता था. समझा जाता था कि उस लड़की का ताजा खून उनकी फसल को सींचेगा. इससे भी अधिक क्रूरता की बात तो यह होती थी कि उस लड़की की लाश पर से खाल उतार ली जाती थी और देवी की पोशाक के रूप में उसे मंदिर का पुजारी पहना करता था. इसका अर्थ यह निकाला जाता था कि देवी की प्रतिमूर्ति वह लड़की मरी नहीं है, बल्कि मरते ही फौरन उस पुजारी के रूप में जीवित हो गई है.

नेशनल पब्लिशिंग हाउस,
23 दरियागंज, दिल्ली-6.

अंगूठी की चोरी (पृष्ठ ३९ से आगे)

नहीं होने दूंगा. और मेहनत करके ईमानदारी का काम तो अच्छा ही होता है."

उस दिन चाचा और चाची से ज्यादा शोभा की आंखों में चमक आई. पिछले कई दिन से वे सब देख रहे थे—दिनेश रात के बारह बजे तक पढ़ता है और सुबह 6 बजे फिर जुट जाता है.

इसके कुछ दिन बाद एक दिन दिनेश को अपने मां और बाप घर में इंतजार करते मिले. उनका इस तरह अचानक क्यों आना हुआ है, इसका कारण भी शीघ्र पता चल गया.

चाचा ने दिनेश को अपने पास बिठाकर उसके हाथ को प्यार से सहलाते हुए उसकी उंगली में एक अंगूठी पहना दी. उसे देखकर वह चिहुंक उठा—"अरे, यह तो वही गुम हो जाने वाली अंगूठी है!" उसे चौंकते देख चाचा ने मुस्कराकर कहा, "हां-हां, यह वही अंगूठी है. अब यह तुम्हारी हुई. मैं तुम्हारे रंग-ढंग से बहुत निराश हो गया था. अपनी आंखों के आगे तुम्हें बिगड़ते देख जब नहीं सहा गया, तो बिजनौर वापस भेजने वाला था. लेकिन शोभा ने तुम्हें सुधारने की जो योजना मेरे आगे रखी, वह पसंद आई. उसने पहले तुम्हें अंगूठी के लिए ललचाया. फिर उस रात को जब तुम सो रहे थे, हमने तुम्हारी उंगली से अंगूठी निकाल ली. पर ऐसा करके हम निश्चित नहीं हुए. मैं तुम्हारे पीछे लगा रहा कि कहीं तुम घबड़ाहट में कोई ऐसा-वैसा काम न कर बैठो. स्टेशन तक मैं तुम्हारे पीछे गया था. खैर, मुझे अब संतोष है कि मैं अपने दोस्त को उनका आदर्श बेटा सौंप रहा हूं. मुझे पूरा विश्वास है कि तुमने जो उत्साह और लगन दिखाई है, उससे तुम अगली जिंदगी में बहुत ऊंचे पद पर पहुंचकर रहोगे."

उसके मां-बाप शोभा की प्रशंसा गद्गद् भाव से कर रहे थे. दिनेश ने आंसुओं से भीगी पलकें उठाकर शोभा को देखा और भरे-भरे स्वर में बोला, "मैं आप सबका बहुत आभारी हूं. लेकिन इतना आग्रह मेरा भी है कि मुझे काम करने से रोका न जाए. और यह अंगूठी शोभा की है उसे ही वापस कर दी जाए."

इतना कहने के बाद भी दिनेश को लगा कि वह जो कुछ कहना चाहता था, भावावेश में उससे वह बात कहते नहीं बनी है और कुछ का कुछ कह गया है.

दिनेश अगले दिन स्कूल पहुंचा, तो अपने को काफी हल्का-हल्का अनुभव कर रहा था. सोचा था आज पूरे दो रुपये का माल जी खोलकर खाएगा और मस्ती से घूमेगा. लेकिन जब चाट के खोमचे के पास चाट खाने खड़ा हुआ, तो चवन्नी का माल खाकर ही उसे लगा कि इतना भी बहुत खर्च कर बैठा. स्कूल छूटने पर कहीं भी जाने से पहले उसके कदम प्रेस की ओर मुड़ गए.

किंतु वहां भी जा नहीं पाया, रास्ते में ही शोभा, चाचा, चाची, माता जी और पिता जी खड़े मिल गए. शोभा बोली, "आज तो छुट्टी मनाकर हमारे साथ सिनेमा चलना होगा, भैया!"

दिनेश यह स्नेह-भरा आग्रह टाल न सका.

नवभारत टाइम्स, बंबई-1.

kissekahani.com

उद्धरण प्रतियोगिता नं. 31 का परिणाम

सही उत्तर : 1–लिया, 2–उपभोग, 3–मोटा, 4–बील, 5–उमड़ती, 6–उड़, 7–उसी, 8–आग, 9–मोहरों, 10–रोजी, 11–कछुआ, 12–नाप.

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 31 में दो सर्वशुद्ध हल प्राप्त हुए, इसलिए प्रथम पुरस्कार सर्वशुद्ध हल पर दो प्रतियोगियों ने जीता, जिनमें से प्रत्येक को 350 रुपये प्राप्त हुए. इसी प्रकार एक अशुद्धि पर 27 प्रतियोगियों में से प्रत्येक को 11 रुपये 12 पैसे प्राप्त हुए.

अगर आपको पूरा भरोसा है कि आप पुरस्कार के हकदार हैं और आपका नाम पुरस्कार विजेताओं की सूची में नहीं है, तो आप 20 अगस्त 1971 से पूर्व प्रतियोगिता संपादक, 'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता, पो. बैग नं. 207, टाइम्स आफ इंडिया प्रेस, बंबई-1 के पते पर एक पत्र लिखें. उस पत्र में अपनी पूर्ति की अशुद्धियों की संख्या, पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर या नकद रसीद का नंबर दें. साथ में जांच की फीस के रूप में एक रुपया मनी आर्डर या पोस्टल आर्डर द्वारा भेजें. यदि आप का दावा सही होगा, तो पुरस्कार की राशि को उसी के अनुसार फिर से वितरित किया जाएगा.

पुरस्कार की राशि अगस्त 1971 में कार्यालय से भेजी जाएगी.

सर्वशुद्ध हल वाले 2 विजेता : प्रत्येक को 350 रुपये

1—श्रीमती एस. डी. चुघ, द्वारा श्री पी. एन. चुघ, बी. ए., डी-33/बी, विजय नगर, दिल्ली-9. 2—सुशीला चुघ, द्वारा श्री पी. एन. चुघ, बी. ए., डी-33/बी, विजय नगर, दिल्ली-9.

एक अशुद्धि : 27 विजेता : प्रत्येक को 11 रुपये12 पैसे

1—अजय कुमार, नानपारा, जिला बहराइच. 2—मुकेश अग्रवाल, चन्दौसी. 3–सुदेश अग्रवाल, चन्दौसी. 4–कु. रेनू अग्रवाल, चन्दौसी. 5–राजेन्द्रकुमार अग्रवाल, चन्दौसी. 6–सौदागर चंद, दिल्ली. 7–आर. एल. चुघ, दिल्ली. 8–कुमारी एम. बी. चुघ, दिल्ली. 9–पी. एन. चुघ, दिल्ली. 10–मधु चुघ, दिल्ली. 11–आशा चुघ, दिल्ली. 12–कुसुम चुघ, दिल्ली. 13–कु. सीमा चौरसिया, सागर. 14–गोविंद, नई दिल्ली. 15–कु. कुसुम लता, दिल्ली. 16–कविता, देहरादून. 17–श्रीमती भूपिन्दर कौर, दिल्ली. 18–श्रीमती विनोद कालरा, दिल्ली. 19–श्रीमती बी. के. कक्कड़, दिल्ली. 20–इन्दरचन्द मुथा (जैन), पो. बागबाहरा, जिला रायपुर. 21–पुनी कुमार मेहता, नई दिल्ली. 22–कु. नील कमल, दिल्ली. 23–पोटन लाल, दिल्ली. 24–विमल राजदेव, दिल्ली. 25–रणधीर कुमार, दिल्ली. 26–कु. सुभाष कुमारी, दिल्ली. 27–शलभ सिंघल, चन्दौसी.

जिन पुस्तकों से संकेत-वाक्य लिये गए

1–भारत मेरा घर—ले. सिंथिया बोल्स—प्र. पर्ल पब्लिकेशंस, बंबई—पृ. 22. 2–लोकतंत्र—ले. विचित्र—प्र. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद—पृ. 16. 3–उपर्युक्त—पृ. 19. 4–उपर्युक्त—पृ. 39. 5–विशाल हिमाचल—ले. हंसराज दर्शक—प्र. संमार्ग प्रकाशन, दिल्ली—पृ. 17. 6–उपर्युक्त—पृ. 27. 7–किशोर गाथाएं—ले. श्यामलाल 'मधुप'—प्र. सामयिक प्रकाशन, दिल्ली—पृ. 68. 8–अंतर्राष्ट्रीय लोक-कथाएं भाग 1—ले. कुसुम सेठ—प्र. राजकमल प्रकाशन, दिल्ली—पृ. 41. 9–भारत की लोककथा निधि भाग 1—ले. शंकर—प्र. चिल्ड्रंस बुक ट्रस्ट, दिल्ली—पृ. 31. 10–उपर्युक्त—पृ. 36. 11–धरती और आकाश—ले. अ. बोलकोव—प्र. विदेशी भाषा प्रकाशन गृह—पृ. 13. 12—उपर्युक्त— पृ. 105.

स्वाधीनता दिवस पर 1000 रु. की बजाय **1500** रु. के विशेष पुरस्कार

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 34

सर्वशुद्ध या निकटतम पूर्ति पर 1000 रु.
न्यूनतम अशुद्धियों पर 500 रु.

इस प्रतियोगिता के संकेत-वाक्य विस्तृत हिंदी साहित्य से लिये गए हैं. इसलिए जो पाठक सबसे अधिक पुस्तकें पढ़ते होंगे, उनके लिए खेल-खेल में डेढ़ हजार रुपये जीतने का यह स्वर्ण अवसर है.

सामने के पृष्ठ पर 14 संकेत-वाक्य दिए गए हैं. प्रत्येक वाक्य में एक शब्द का स्थान डैश लगाकर छोड़ दिया गया है. उसी पृष्ठ पर एक पूर्ति-कूपन है, जिसमें दो पूर्तियां दी गई हैं. जिस क्रमांक का संकेत-वाक्य है, प्रत्येक पूर्ति में उसी क्रमांक के आगे अकारादि क्रम से दो शब्द दिए गए हैं. उनमें से एक शब्द सही है, और दूसरा गलत. बस, आप गलत शब्द पर × का निशान लगा दीजिए.

'पराग उद्धरण प्रतियोगिता' के नियम और शर्तें

1—एक पूर्ति-कूपन में दो पूर्तियां दी गई हैं. आप एक पूर्ति भरें या दोनों—पूरा कूपन रेखाओं पर काटकर भेजना होगा. पूर्तियां 'पराग' में प्रकाशित पूर्ति-कूपनों पर ही स्वीकार की जाएंगी. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को क्रास कर दीजिए, और उसके नीचे पूर्ति क्रमांक आदि कुछ न भरिए.

2—पूरे कूपन की दोनों पूर्तियों का प्रवेश-शुल्क 1 रुपया और केवल एक पूर्ति का प्रवेश-शुल्क 50 पैसे है. दोनों में से किसी भी पूर्ति को आप पहली मान सकते हैं. एक ही नाम से आप चाहे जितनी पूर्तियां भेज सकते हैं. एक ही लिफाफे में अनेक नामों और परिवारों की पूर्तियां भेजी जा सकती हैं. लिफाफे के अंदर रखी सभी पूर्तियों का सम्मिलित प्रवेश-शुल्क एक ही पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर, या नकद रसीद से भेज सकते हैं. किंतु ऐसी सभी पूर्तियों के नीचे कुल पूर्तियों की संख्या, उनके क्रमांक, और पूर्ति-कूपन में पोस्टल आर्डर, मनी आर्डर की रसीद या नकद रसीद का नंबर लिखना अनिवार्य है. पोस्टल आर्डर, या डाकखाने से मिले मनी आर्डर की रसीद या नकद रसीद पूर्तियों के साथ अवश्य नत्थी करके भेजिए. डाक-टिकट या करेंसी नोट प्रवेश-शुल्क के रूप में स्वीकार नहीं किए जाएंगे. आप कार्यालय में नकद रुपया जमा करके या डाक-खर्च सहित मनी आर्डर भेज कर 50 पैसे मूल्य की चाहे जितनी नकद रसीदें प्राप्त कर सकते हैं और उन्हें अगले चार महीने तक, प्रवेश-शुल्क के रूप में, पूर्तियों के साथ नत्थी कर सकते हैं.

3—बंबई के प्रतियोगी अपनी पूर्तियां 'टाइम्स आफ इंडिया भवन' के प्रवेश द्वार पर बनी 'स्थानीय प्रवेश पेटी' में डाल सकते हैं. बंबई से या डाक से आने वाली सभी पूर्तियों के लिफाफों के खुलने वाली तरफ भेजने वाले का पता, तथा उनके पीछे यह पता लिखा होना चाहिए—'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. 34, प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं. 200, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बंबई-1. मनी आर्डर फार्मों और रजिस्टरी से भेजे जाने वाले लिफाफों पर 'पोस्ट, बैग नं. 207' न लिखें, पोस्टल आर्डर क्रास कर दें. उसमें 'पाने वाले' के स्थान पर 'पराग उद्धरण प्रतियोगिता नं. 34' और 'पोस्ट आफिस' के आगे—'बंबई 1'—लिखें. कृपया संपादक के नाम पूर्तियां या शुल्क न भेजें.

4—प्रथम पुरस्कार 1000 रु. उन प्रतियोगियों को मिलेगा, जिनकी पूर्तियों में संकेत-वाक्यों के सही पूरक शब्दों पर निशान नहीं होंगे, और सभी गलत शब्दों पर निशान लगे होंगे. यदि ऐसी कोई पूर्ति प्राप्त न हुई, तो उसके निकटतम अशुद्धियों वाली पूर्तियों पर प्रथम पुरस्कार दिया जाएगा. द्वितीय पुरस्कार 500 रु. प्रथम पुरस्कार प्राप्त पूर्तियों से निकटतम अशुद्ध पूर्तियों पर प्रदान किया जाएगा. समान अशुद्धियों के एक से अधिक विजेताओं को घोषित पुरस्कार बराबर बांटे जाएंगे.

5—अपना नाम और पता प्रत्येक पूर्ति-कूपन पर सुपाठ्य और स्पष्ट अक्षरों में लिखिए. डाक में खो जाने वाली, विलंब से प्राप्त होने वाली, या गंदी व कटी-फटी पूर्तियां प्रतियोगिता में शामिल नहीं होंगी.

6—सभी पूर्तियां कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि सोमवार, 6 सितंबर 1971 है. अपनी पूर्तियां भेजने के लिए अंतिम तिथि की प्रतीक्षा न कीजिए. निर्धारित अवधि के प्रारंभिक दिनों में ही पूर्तियां भेज देने से आप अनेक भूलों से बच सकते हैं. सर्वशुद्ध शब्दावली तथा संबंधित पुस्तकों व पुरस्कार विजेताओं की सूची 'पराग' के नवंबर 1971 के अंक में प्रकाशित की जाएगी.

7—प्रतियोगी को इस प्रतियोगिता से संबंधित प्रत्येक विषय में प्रतियोगिता संपादक का निर्णय अंतिम रूप से मान्य होगा. वैधानिक रूप से विवादास्पद विषयों में बंबई के संबद्ध न्यायालय को ही निर्णय देने का अधिकार होगा.

8—नियमों के प्रतिकूल तथा पूर्ति-कूपनों में आवश्यक विवरण से रिक्त कोई भी पूर्ति प्रतियोगिता में सम्मिलित नहीं की जाएगी. 'पराग' तथा संबद्ध प्रकाशनों के कर्मचारियों को इसमें भाग लेने का अधिकार नहीं होगा.

kissekahani.com

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं० 38 के संकेत-वाक्य

1– "चौथी बार जा रहा हूं. लेकिन कष्ट तो मानसिक स्थिति-भर है. फिर मनुष्य कष्ट——करने के लिए पैदा भी हुआ है."

2– "परिवार कैसा? बचपन में विवाह हुआ था तो चार साल पहले ब्राह्मणी का देहांत हो गया, और हम——की साधना के लिए घर से निकल पड़े."

3– आखिर शांतिनिकेतन के पास सुरुल गांव में इसे——रूप दिया जा सका.

4– पीछे से उनके——कर रहे होने के अंध-भय ने मेरे समस्त पृष्ठदेश को कुंठित कर डाला था.

5– समाधि के प्रवेश द्वार पर——वर्दी में दो सैनिक अचल भाव से मूर्ति की भांति खड़े हुए दिखाई दिए.

6– इस दुर्भाग्यपूर्ण——ने ही उसके सौभाग्य की संभावनाओं को ढंक लिया है. कौन हो सकता है वह आदमी, जो उससे पहले वहां रहता रहा था.

7– अगले दिन फिर सुबह दोनों——रोशनी से जाग उठीं. निगाहें मिलीं. निगाहों में मुसकान खिली.

8– "अगर कहूं कि ऊब गया हूं तो क्या आप कुछ सहायता करने का इरादा रखती हैं. शहर में मित्र भी हैं, अभिभावक भी, पर मेरा——उससे कम तो नहीं होता!"

9– पानी धीमा हो गया था और लगता था थोड़ी देर में बिलकुल रुक जाएगा. पश्चिम का आकाश——रहा था और सूरज की पीली किरणें हलके बादलों के पीछे से फूटने लगी थीं.

10– हिंदुओं में सचमुच यह नियम है कि नहाए बिना दान नहीं लेते. इसलिए मुसाफिर नहाने के लिए कपड़े उतार कर नदी में जो उतरा, तो उसके पांव कीचड़ में——गए.

11– किसी हिंदू परिवार में कोई मृत्यु हो जाने पर इन मुस्लिम परिवारों में भी, हिंदुओं की भांति, चूल्हे में आग नहीं——जाती थी.

12– युवक के पूछने के ढंग से उस्ताद के चेहरे पर——के पिटे हुए गुरुत्व की भावना आज फिर अपना रंग ले आई.

13– "हजरत, मुझे आपकी पदवी से आपत्ति नहीं है. मैं उस——का भीतरी हुलिया बयान कर रहा हूं."

14– मैं अपनी——हथेलियां जोर-जोर से पेट पर फेरने लगता हूं, फरता जाता हूं. फेरता जाता हूं और मिचलियां बढ़ती जाती हैं, बढ़ती ही जाती हैं.

यहां से काटिए

'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 38 (पूर्ति-कूपन)

शब्दों के प्रत्येक जोड़े में से जो शब्द आप गलत समझें, उस पर × का चिन्ह बना दें. यदि आप केवल एक ही पूर्ति भरें, तो दूसरी पूर्ति को काट कर दें.

१	वहन	सहन	१	वहन	सहन
२	तंत्र	मंत्र	२	तंत्र	मंत्र
३	अमली	असली	३	अमली	असली
४	अनुकरण	अनुसरण	४	अनुकरण	अनुसरण
५	पूरी	भूरी	५	पूरी	भूरी
६	विरासत	हिरासत	६	विरासत	हिरासत
७	खिड़कियां	लड़कियां	७	खिड़कियां	लड़कियां
८	वहशीपन	विदेशीपन	८	वहशीपन	विदेशीपन
९	खुल	धुल	९	खुल	धुल
१०	धंस	फंस	१०	धंस	फंस
११	डाली	बाली	११	डाली	बाली
१२	दीनता	हीनता	१२	दीनता	हीनता
१३	पाजी	पापी	१३	पाजी	पापी
१४	गरम	नरम	१४	गरम	नरम

पूर्ति क्रमांक :. . . . कुल पूर्ति संख्या :. . . . पूर्ति क्रमांक :. . . . . कुल पूर्ति संख्या :. . . .

इस प्रतियोगिता में भाग लेते हुए मुझे प्रतियोगिता के सभी नियम व शर्तें पूर्णतया स्वीकार हैं.

नाम व पूरा पता (स्याही से) :——

पोस्टल आर्डर / मनी आर्डर रसीद / नकद रसीद / का नंबर : . . . . . .

यहां से काटिए

सभी पूर्तियां बंबई कार्यालय में पहुंचने की अंतिम तिथि: सोमवार ६-९-१९७१

पूर्तियां भेजने का पता: 'पराग' उद्धरण प्रतियोगिता नं. 34, प्रतियोगिता विभाग, पोस्ट बैग नं. 207, टाइम्स आफ इंडिया भवन, बम्बई-1.

kissekahani.com

पी हैं कभी दिन भर की ख़ुशियाँ ?

फ़ैण्टा ऑरेंज
क्या कहने....
जी चाहता है
प्यास लगे !

फ़ैण्टा, कोका-कोला कम्पनी का उत्पादन है

FANTA IS A REGISTERED TRADE MARK OF THE COCA-COLA COMPANY

CMCF-1-203 HIN

kissekahani.com

नन्हे-मुन्नों के लिए शिशुगीत

पिछले कई वर्षों से 'धर्मयुग' में शिशु गीत छपते जा रहे हैं. इन शिशु गीतों के चयन में बड़ी सावधानी बरती जाती है, क्योंकि शुद्ध शिशु गीत लिखना उतना आसान नहीं है, जितना समझा जाता है. इसी लिए अच्छे गीत बहुत कम लिखे जाते हैं. ये गीत ऐसे होने चाहिएं कि इन्हें चार से छह साल तक के बच्चे आसानी से जबानी याद कर लें और अन्य भाषा-भाषी किशोर भी इनका आनंद ले सकें. इनसे मुहावरे-दार हिंदी सरलता से जबान पर चढ़ जाती है.

अंग्रेज़ी का शौक

पेंट और बुशशर्ट पहनकर,
क़लम लगाकर सस्ता;
चूहेमल अंग्रेजी पढ़ने
आए लेकर बस्ता;

ए. बी. सीख चुके, टीचर ने
और पढ़ाया आगे;
'सी' से कैट सुना जैसे ही,
पूंछ दबा कर भागे!

—विनोद रस्तोगी

kissekahani.com

झूठी शान

गधेराम ने लिया हाथ में
लंबा-सा अखबार;
गिटर-पिटर अंग्रेजी बांची,
बोला, "सब बेकार!"

बंदर बोला, "पंडित ऐसा
नहीं मिलेगा, यार !
इंग्लिश बोल रहा है, लेकर
हिंदी का अखबार!"

—पंकज गोस्वामी

आने दो बरसात

फुदकू जी ने किया पेश जब
शादी का प्रस्ताव;
मेंढकमल ने मन ही मन में,
दिया मूंछ पर ताव!

प्रश्न हुआ जब, "लाएंगे कब,
लल्ला जी, बारात?"
बड़े ठाट से बोला मेंढक—
"आने दो बरसात!"

—शांति मालवीय

kissekahani.com

रेखागणित को आसान व भूगोल को रंगीन बनाइये...

पिथागोरस को मात दीजिये। रेखाचित्रों को रंगीन बनाइये ... कैम्लिन इन्स्ट्रुमेंट बाक्स व रंगीन पेंसिल लीजिये। जब कि एक काम में अचूक व दिखने में आकर्षक है तो दूसरी मुलायम लेड वाली और चलने में सरल है। पर दोनों टिकाऊ, कम घिसने वाली और किफ़ायती हैं।

कैम्लिन आपके लिए बैक्स केयान, वाटर कलर, पोस्टर कलर आदि विविध प्रकार की आर्ट सामग्रियां बनाते हैं। आपके नजदीक के विक्रेता के यहां मिलते हैं।

कैम्लिन

कलर पेंसिल्स व
इन्स्ट्रुमेंट बाक्स खरीदिये

कैम्लिन प्राइवेट लिमिटेड
आर्ट मेटीरियल डिविजन,
जे. बी. नगर,
बम्बई-५६ (भारत)

बेनेट, कोलमैन एंड कंपनी लिमिटेड, स्वत्वाधिकारी के लिए रमेश चंद्र द्वारा नेशनल प्रिंटिंग वर्क्स, 10 दरियागंज, दिल्ली-6, से मुद्रित और प्रकाशि

www.kissekahani.com

स्वाद की दुनिया
शालिमार बिस्किटों की दुनिया

जी हाँ, शालिमार बिस्किट जिन्हें देखते ही मुँह में पानी भर आता है! बिस्किट हों तो शालिमार! इनके स्वाद का जवाब नहीं! एक बिस्किट खाइए, जी चाहेगा, और खाएँ। लगता है, दुनियाभर का स्वाद शालिमार बिस्किटों में ही सिमट आया है। इनमें कई तरह के बिस्किट हैं, जैसे—शालिमार ग्लूकोज बिस्किट, शालिमार मारी बिस्किट, शालिमार थिन ऑरोरूट बिस्किट और तरह तरह के मजेदार क्रीम बिस्किट्स। हाँ तो फिर आइए; शालिमार के स्वादभरे बिस्किटों की दुनिया आप ही के लिए है। जहाँ चाहें, जब चाहें; दोस्तों-रिश्तेदारों के साथ शालिमार के स्वाद भरे बिस्किट खाइए—बड़ा मजा आएगा!

स्वाद हो तो कैसा? **शालिमार बिस्किट जैसा!**

CMSB-19-203 Hin

kissekahani.com

REGD. No.

कार्न फ़्लेक्स तथा फल एक सर्वोत्तम एवं पौष्टिक नाश्ता

मोहन्ज न्यू लाइफ कार्न फ्लेक्स प्रोटीन, खनिज कार्बोहाइड्रेटस और विटामिन देने वाले पौष्टिक तत्वों से भरपूर हैं जो नाश्ते को एक आदर्श खुराक का पूरक बनाते हैं। आज ही कुरमुरे फ्लेक्स की एक बाउल खाइये और लुभावनी सुगन्ध और टोस्ट जैसे स्वाद का आनन्द लीजिए।

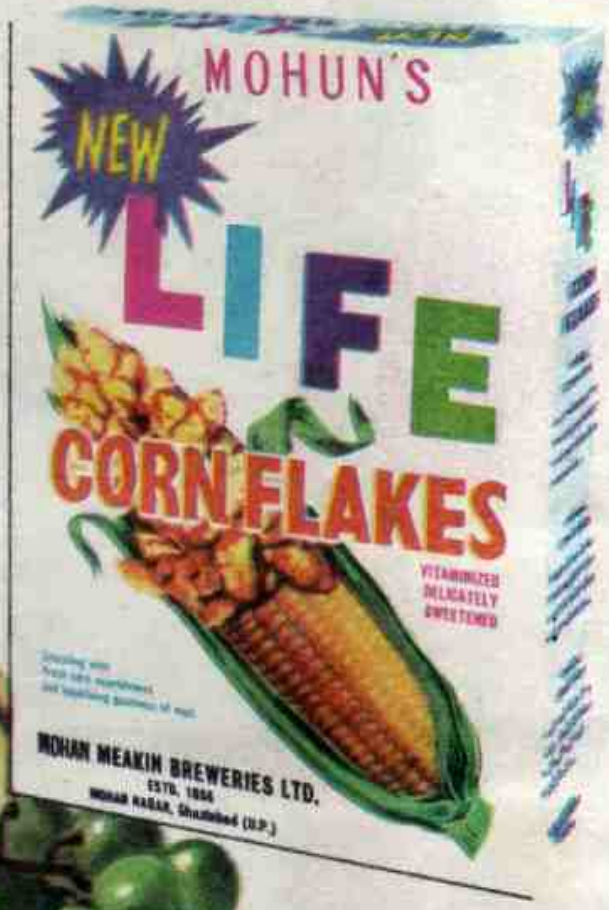

न्यू

मोहन्ज़ लाइफ कार्न फ़्लेक्स

१८५५ से Mohmeak's आपकी सेवा में